

प्रकाशक—

लाला गुलजारीलाल जन
महाधीर रस्टोरण्ट
दरीवा पत्ता,
दिल्ली ।

प्रति	१०००
मूल्य	१ रुपया
बीर सं० २४६१	सन् १९६५

मुद्रक—
नवलक्ष्मी
दरीवा व
देहली

आय निवेदन

यह दिल्लीवासियों का मोभाग्य है कि परम पूज्य आचार्यरत्न १०८ था देशभूषणजी महाराज का चातुर्मास इस वर्ष दिल्ली में हुआ। इस चातुर्मास महिष्ठ भद्र तक महाराज के दिल्ली में पाँच चातुर्मास हो चुके हैं। इन चातुर्मासों के पल्लवरूप दिल्ली के जन नर-भारियों में घम के प्रति गहरी आस्था जगी है। इस बात को मैनने निश्चय से देखने का जानने का प्रयत्न किया है और मैन पाया है कि दिल्ली नगर के व्यस्तता भरे जीवन में भौतिक मूल्यों में दबी पिची जिम्मेगी में भी दिल्ली के व्यस्त जन तब मुनिया और त्यागियों के आहार-दान की म्पर्दा करते हैं, जास्व-प्रवचन में भारी सम्प्रा में एकत्रित होने हैं और दक्ष-दान पूजन वयावृत्त्य आदि में उत्तरापूर्वक समय लगाते हैं ता यत् उष मनीवृत्ति को बनाता है जिसमें घम के प्रति गहरी आस्था समाई हुई है। मुनिव्रता के समागम की यह बड़ी भारी उल्लसि है। यदि यह समागम न मिले ता क्या यह घममय बालावरण फिर मित्र मकगा ? निश्चय ही त्याग का ही यह प्रभाव है। जैन सनों और त्यागियों के चमत्कारी व्यक्तित्व का यह प्रभाव है कि नास्तिक जन भी उनके घरलों में पाकर अपने घराने की वृत्तियों पर गहराई से विचार करता है और आत्म-तोष द्वारा घम की उच्च मायतामा और आध्यात्मिक जीवन की प्रव्यथता का सरत भाव में स्वीकार करता है।

आचार्य देशभूषण जी क्रियाशील आचार्य हैं। जन आचार्य का जीवन विविधतापूर्ण होता है। उसे अनुविध सध—मुनि धजिना-आवक आदिका-धम और धर्मियतनों की रक्षा के अपने दायित्व का पूरा करना होता है। देशभूषण जी महाराज अपने इस दायित्व का पूरा करने में

बंदूक सजग रहत है। उनका सजगता का यह प्रमाण है कि वे गत वर्ष जयपुर में पावागड का यात्रा के निमित्त जान बाल थे। किन्तु उन्हें पता लगा कि तीर्थराज सम्मेलन गिन्नर जी के विषय में बिहार सरकार और स्वताम्बर समाज के मध्य ऐसा फरार हुआ है जिसने दिगम्बर समाज के अधिकार समाप्त हो गये हैं और सम्मेलन गिन्नर जी पर दिगम्बरों का स्वताम्बरा की अनुमति पर दाना तक के त्रिय निभर बना लिया गया है। यह बात दिगम्बरों के धार्मिक अधिकारों और स्वाभिमान के विरुद्ध थी। तब आचार्य देशभूषण जी ने उस समझौते के विरुद्ध आवाज उठाई, जनता में जागृति की और घोषणा कर दी कि यदि यह समझौता रद्द नहीं किया गया तो मुझे आत्म गुडि के लिये ११ जुलाई से अनशन करना पड़ेगा। इस निश्चय की घोषणा होने पर जनता में जागृति का लहर दौड़ गई। आचार्य महाराज अनशन के निमित्त तेजा से बिहार करते हुए दिल्ली पहुँचे। उनके साथ अनशन करने की भावना से अनशन त्यागने वाले लोगों की पहचान लगे। और दिग्बरों दिग्बरों समाज की हलचल का बतलाने लगा। किन्तु सरकारी क्षेत्रों के अनुरोध और आस्थासना के कारण महाराज का अनशन स्थगित करना पड़ा और फिर युद्ध के कारण वह मामला अभी तक सुलभ नहीं पाया। अस्तु! तात्पर्य यह है कि आचार्य देशभूषण जी अपने आचार्य पद के दायित्वों का पूरा करने में सदा सचेत रहते हैं।

आचार्य महाराज सरसवती माना के अनशन साधक हैं। वे अपने समय का उपयोग साहित्य-सृजन अध्ययन-वित्तन में ही करते रहते हैं। वे प्रतिवर्ष चानुर्मास का ४२ नई रचनाएँ देकर जन साहित्य की जीर्णोद्धार करते रहते हैं।

उनकी प्रतिभा विंगल और व्यापक है। उनकी मूर्धन्य गहरा है वे समय के पारखी हैं, उनकी सरसती में जार है और उनकी वक्तव्य शक्ति असामान्य है। वे प्रतिदिन प्रवचन करते हैं। किन्तु धाता की प्रति

(१)

नि नर सामग्री मिलता है । वह प्रतिनिधि महाराज के प्रवचन सुनकर भी उठता नहीं । यही महाराज के प्रवचन की विशेषता है ।

उनके प्रवचन के छह मन्त्र ध्वज तब प्रकाशित हो चुके हैं । ये प्रवचन मन्त्र भी सीमित स्वभावों से बने महत्त्वपूर्ण हैं । हम वर के प्रवचन का जो कोई मन्त्र प्रकट नहीं हो पाया किन्तु प्रथम पत्र में महाराज के जो गारुडिभिन और गारुड प्रवचन हुए उन्हें सुनकर मन में आया कि ये प्रवचन यदि प्रकाशित हो सकें तो जनता का उनमें लाभ उठाने का अवसर मिल सकता है । फिर प्रवचन मन में सीमित व्यक्तियों तक ही उठे पुस्तकालय प्रकट करने पर हमसे आशा की जा सकती है । उसी उद्देश्य में प्रथम पत्र के अन्त में निम्न के प्रवचन का मन्त्र करके यह प्रकाशन हो रहा है ।

जाना गुजराती-वार्ता के सम्बन्ध में प्रवचन न पुस्तकालय में उद्घाटन के उपलक्ष्य में इस पुस्तक के प्रकाशन का अवसर मिला है । तथा वास्तविकता हार्दिक-वार्ता के लिए है । ये जाना ही आचार्य महाराज के अत्यन्त प्रथम हैं बड़े प्रथम प्रमाण के लिए महत्त्वपूर्ण है और स्वार्थियों के सेवा-व्यवस्था में हमें रहने है । उक्त अन्त उद्घाटन-पुस्तक सम्बन्ध में फिर से उनका आशा है ।

गुरुकुलिका वार सन् १९६१

चन्द्रभद्र जैन

विषय सूची

१	उत्तम क्षमा धर्म	
२	उत्तम मान्य धर्म	११०
३	उत्तम आज्ञा धर्म	११२
४	उत्तम मत्स्य धर्म	२५३
५	उत्तम गीर्वाण धर्म	३३४
६	उत्तम सयम धर्म	४३५
७	उत्तम उप धर्म	५६६
८	उत्तम त्याग धर्म	६१७
९	उत्तम आर्वाचय धर्म	७६८
१०	उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म	८८९
		९९१०४



दस लक्षणा धर्म

उत्तम क्षमा धर्म

क्षमा धीरस्य भूषणम्

क्षमा ही बर गुणों के लिए भूषण है और वह क्षमा धर्म पर का
 रण वाला है। जब ता शत्रु की सामग्री प्राणा को नहीं मिनता है
 नच नच हम ताव को धरना का राता नही मिनता है। धरने होने
 के लिए साधन भी धरना होना चाहिए; नही धरना प्राप्त हो सकती
 है। असता मा मद्गमय धरने में सत्य में आओ। सत्य धरना
 मिलाने वाला है। धरना की प्राप्ति के लिए जा दग नमस्ते धम
 धताय गये हैं सबसे पहल गान्त की जरूरत है। पृथ्वी को हम चाहे
 कितना भी मारे बूटें धूँके या मन मूत्र रर पर वह समा सहन कर
 नता है। मर तरह रिनेही पुरुष का भा चाहे कितन बाध तरफ म
 दुख धाय वह उन पर शोध नही करता है। मव पर क्षमा रसता है
 मन्धिगुता मिथाना है। पाप या हिमा ना नवर है। एक न एक निन
 नष्ट हा जान थाका है। सकिन जब न मावों को सामने वाल के हृदय
 पर भा प्रतिश्रिया होती है ना उन पर भा हिगा की प्रभाज पडने लगता
 है। जम एह मानव के हृदय में कितना के प्रति दुप भावना धार् और
 सामने वात पुष्प की ना धमी भावना दुर् हा ऐभी ज्ञान में वर कुछ
 समय तक निज जाता है धयथा नष्ट हा गई होनी। अत सामने का
 बल मिलन पर हा वह टिन सकती है। हम अनुभव स भी दग सचाई का
 दखने हैं। किसी शोध करने वाल आदमी के सामने केवल क्षमा धारण
 कर लें ता उसका शोध नष्ट हा जाता है। जब शोध के सामने शोध

घोर गुम्फ के सामने गुम्फे का बत हा जाता है ता वह कुछ समय के लिए टिरा जाता है। परन्तु इसके अत का एक ही उपाय है शान्ति।
 चवाहरणाय—

एक बार वनदेव सात्यकि, वृष्ण और दाहक जगल में घूमने गये थे। घूमते घूमते वे बहुत दूर निचल गये और वहाँ पर उनका रात हो गई। वापस घर आने का मौना नहीं था क्योंकि घोर जगल था। सब ने सोचा कि आज की रात इसी जगल में किसी पेड़ के नीचे बिनाई जाय। हम में से बारी बारी से एक आदमी जागना रहे। और आप सब सोने रहें। यह तय करके वे एक पेड़ के नीचे आ बटे। सबसे पहले दाहक जगा और पहला दने लगा। जब दाहक को छाड़ कर तीना सो गया तो इतन में एक पिशाच उसके सामने आया और बोला—भाई! मुझे बहुत जोर की भूख लगी है। अत मुझे इन तीना आत्मिया को खाना दो। दाहक ने कहा—ये कैसे हा सरता है। मैं इनकी रक्षा के लिए लड़ा हुआ हूँ। अत मेरे देखते हुए किसी को नहीं खा सरता है। अन्त में सागना ही चाहता है ता पहले मुझे परास्त कर और फिर उनको खा। इस पर पिशाच उठने के लिए तयार हो गया। पिशाच और दाहक दोनों आपस में भिड़ गये और दोनों की गुत्थमगुत्था होन लगी। जम जमे दाहक का रोप बढ़ता जाता था उसी प्रकार पिशाच का बल भी बढ़ता गया। दाहक पिशाच का परास्त न कर सका और उमका समय पूरा हो गया। अब सात्यकि की बारी थी। वह उठा और बाद में थका हुआ दाहक चुपचाप सा गया। कुछ दर के बाद पिशाच फिर आया उसने सात्यकि से भा बही बात कही। सात्यकि ने कहा कि मेरे रहते हुए मैं उनको खा नहा सकता है पहले मुझे हरा। और फिर इन सबको खा। सात्यकि भा पिशाच से लडा और पिशाच को परास्त नहीं कर सका। यह भा दाहक का तरह नोटू-लोहान हो गया। इनके बात बल दय की बारी आई तो वह भा चक करके सो गया। वनदेव भी पिशाच से लडा परन्तु उसकी स्थिति भी दाम्न और सात्यकि की तरह हो गई

घोर वह बचकर चकनाचूर हो गया पर पिगाच को परास्त नहीं बन सका। जब घात में कृष्ण भी धारी थी। जब वह पहरा मन ब निए उठे तो पिगाच ने उनसे भावही बान कनी दोनों का युद्ध शुरू हुआ कृष्ण गान्त सके हा गये। पिगाच का जस जम बन बढ़ता गया धन धन कृष्ण गान्ति ग उसे कहते रहे—पिगाच ! भावाग भू बडा बार है। तेरी माता धय है जिसने तुम्हें जसा वीर पुत्र पत्ता किया। इस तरह म जम जम कृष्ण गान्त रहने गये वस वस उन पिगाच का धन भी निरन होना गया। घोर व इतना निबल हा गया कि कृष्ण ने उग पकड़ कर घपना जब मे रस लिया।

इमलिए भय्य प्राणियो ! ये एक रूपक है। काध ही पिगाच है घोर नागवान है। जब तक इम सामने म बल मिलता है तब तक यह टिकता है जब उमे सामने स बन नही मिलता है तो व निबल हा जाता है कृष्ण क सामने यह पिगाच हार गया जाना है। गवेरे सब उठे ता सीना व गरीर लान लाल हा रहे थे। जब कृष्ण ने उनम पूजा ता उहने कहा कि हम भात मे एक पिगाच स लडे थे घोर उमा का यह परिणाम है कि हमारा गरीर मून म लान हा रहा है। तब कृष्ण ने सबसे कहा कि पिगाच भयकर नहा होता है। यान उम बन न दे ता वह अत्यन्त निबल हो जाता है जिसक पनस्वरूप यानि हम जम-जौम उस पर राप करग वह बसे वस ही भयकर होना जायगा। तुमने उम पर राप किया था इसनिए तुम ता उम घपने वग मे नहा कर मर। दगा मने उम पर जरा भा राप नही किया घोर वह मरे सामने इतना निबल हो गया कि उम मने घपनी जब मे रस लिया घोर वह मरा गस बन गया।

कहने का सात्त्वय यह है कि काधा के सामने कभी प्रीय नहा करना चाहिए वरु क्षमा स ही वग मे घा सक्ता है। बिना क्षमा रिये वह वग मे नहीं घा सक्ता। धूल उडती हा ता धूल म धूल को नहीं दवाया

जा सकता। उस पर पानी ही टालना चाहिए। वह पानी से दवाई जाती है। इसी तरह अगर हम क्रोध पर क्षमा का पानी नहीं डालेंगे तो वह कभी भी नहीं दवेगा। अतः क्षमा अमरता प्राप्त करने का पहला धर्म है। इसका अपने जीवन में अवश्य ध्यान रखना चाहिए। क्रोध चार प्रकार का है—अनन्तानुबन्धी क्रोध, अनन्तानुबन्धी माया अनन्तानुबन्धी मान और अनन्तानुबन्धी लाभ। अप्रत्याख्यान क्रोध अप्रत्याख्यान मान अप्रत्याख्यान माया अप्रत्याख्यान लोभ। प्रत्याख्यान क्रोध प्रत्याख्यान मान प्रत्याख्यान माया, प्रत्याख्यान लाभ। संज्वलन क्रोध संज्वलन मान संज्वलन माया संज्वलन लाभ। इस प्रकार कषाय की भिन्न भिन्न प्रकृतियाँ गौण हैं। अस कर्म की प्रकृति के अनुसार ताप मूल उन्मत्त के निमित्त से जीव की आयु बंध जाती है। इस तरह तीव्र मूल कषाय के अनुसार जीसा भी आयु बंध किया हो उसी प्रकार नीच उच्च या पगु नारकी देव बिच्छू सप आदि गतियाँ में जन्म लेता है। उनके जन्म का मुख्य निमित्त कारण एवं क्रोध रूपी पिशाच है। इस क्रोध ने अस आत्मा को हमारा अनेक नित्य गतियाँ में भ्रमण कराया है। इसलिए विवेकी मानव के लिए क्रोध रूपी पिशाच को जीतने के लिए अक्रोध साधन है दूसरा और कोई साधन नहीं है। क्रोध को नष्ट करने के लिए कवल मानव के लिए क्षमा धर्म का पाठ बीतराग देव ने पढ़ाया है। जब तक यह पाठ ठीक तरह से याद न करें, वह हमारे हृदय में न उतरे सब तक इस पिशाच के बल की हम दूर नहा कर सकते हैं।

क्रोध से हानि—

क्रोधाद् दुर्योधनो नष्ट क्रोधा नष्टो हि रावण ।

शिशुपालस्तथा क्रोधाद् विनष्टो मधुकैटभ ॥

अर्थात् क्रोध के कारण दुर्योधन का धिनाग हो गया। क्रोध से रावण नष्ट हो गया। क्रोध से ही शिशुपाल और मधुकैटभ का सधनाग हो गया।

हा पाठ याद करना पड़ेगा कि मरु स्वभाव ही अशोध स्वभाव है। मात्र यह पाठ सम्पूर्ण मानव के सामने रखा गया है। जब तक मानव प्राणी इस पाठ को ठीक प्रकार से मनन नहीं करता है तब तक इस मानव को धर्मरता का माग नहीं मिल सकता है अर्थात् मांग माग की प्राप्ति नहीं हो सकता है।

दस धर्म को पालने से अशुद्ध न सत्य में शीघ्र प्रत्यु से धर्मरता में पलायन किया जा सकता है। इनमें सबसे पहला धर्म क्षमा है। कहा भी है कि—आन्तिश्चेत् क्वचन विम्—यदि मानव के पास क्षमा का गुण होता तो उस क्वचन का कोई आवश्यकता नहीं है। क्षमा स्वयं अशुद्ध का काम करता है। उसके प्रतिपक्षा क्रोध का उत्पन्न करने का विषय कहता है कि—क्रोधश्चेत् अनलेन विम् अर्थात् यदि क्रोध है तो अनल अर्थात् अग्नि का कोई प्रयोजन नहीं है। जिस प्रकार अग्नि सम्पूर्ण पदार्थों को भस्माभूत कर देती है, उसी प्रकार क्रोध के द्वारा आत्मा की बहुमूल्य सम्पत्ति तत्काल नष्ट हो जाती है।

क्रोध मायात् हिमा का स्वरूप है। क्रोध के आशय में अहिंसात्मक प्रवृत्तियों का न जागरण होता न सबद्ध न होता है तथा उनका संरक्षण भी नहीं हो सकता। क्रोध सबसे पहला मनुष्य के विवेक पर दृष्ट पड़ता है उस विवेक भ्रष्ट बनाता है। इससे उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है उसका अन्तर्मन आप माइड मानसिक सन्तुलन कायम नहीं रहता। उस स्थिति में वह पवित्र अहिंसात्मक प्रवृत्तियों का परिपालन करने में असमर्थ हो जाता है। वह क्रोधी हिंसात्मक प्रवृत्तियों में बड़ी मरलता से संचलन हो जाता है। सम्भारता से विचार किया जाय तो आत्मा के उत्कर्ष के लिए अहिंसात्मक शक्तियों में क्रोध का विनाश स्थान है। अतः धर्मों में अहिंसा का प्रथम स्थान है तथा धर्मों में क्रोध का भी पहला स्थान है। जिस तरह मनुष्य अपने सारे सिद्ध संपादन अथवा राशियों से डरना है उससे

भा भयकर डर भय और पवित्र पुरुषों का शोधी स लगा करता है ।
 शोधी व्यक्ति मानसिक सन्तुलन गाकर न वाणी पर समय रखता है न
 उमरा इन्तियों पर समय रहता है और मन उसके वातु में झिंकुन
 रहता ही नहीं है । गम्भीरता ने विचार कर देखा जाय तो शोधी की
 स्थिति में मनुष्य एक जीवाना बन जाता है । उसे तो एक पागल के रूप
 में देखा जाय । पागल आत्मी के हाथ में अगर हथियार हा तो वह
 न मानुस बना करे । श्मी प्रकार श्राधा भा कतव्य अतव्य धम अधम
 मन्त्राचार आदि सारा सामाजिक वा अतिव्रमण कर स्वच्छन्द पशु की भांति
 प्रवृत्ति करने लगता है । न वह बुजुर्गों वा सम्मानित करता है न माता
 पिता की आजा मानता है वह गुरु के वचनों की भा वा कीमत् नहीं
 करता । वास्तव में श्राध आम्बे सुतः रहने हुए भी जीव के शिष्य की भावों
 वा कर उसका एक अद्भुत अथे का रूप प्रकट करता है । इस तरह
 शोधी न केवल श्राधा बनता है वह पागल भी रहता है । समझदार
 आत्मी का कतव्य है कि जिस तरह न भयकर जानकर में अपना रण
 करता है परन्तु दूर रहना है श्मी नरन न उसे श्रद्ध अर्पित के समीप
 आने पर शमा के द्वारा समय के मानसिक सन्तुलन को नहीं खीना
 चाहिये । आश्रित पागल के आने पर दूसरा आत्मी पागल नहीं बनता ।
 किसी ने मूर्खता की है तो उसका जबाब मूर्खता के माध्यम में नहीं
 दिया जाना चाहिये । मन्ता ने श्राध का जानने के लिए अन्नाध भाव
 अथवा क्षमा का पवित्र माग कतनाया है । इस क्षमा के द्वारा स्वयं को
 विन्तुन क्षति नहीं पहुँचती और क्षमा की सीतल समीर लगने पर श्रद्ध
 व्यक्ति का मन्तिष्क उत्तेजनायुक्त बन कर गान्त बन जाता है । क्षमा एक
 ऐसी श्राध है जो सबको दान्ति देती है । और श्राध एक ऐसी
 बीमारी है जो स्वयं को और आमपास के बटन उठने वालों का सब
 प्रकार का कष्ट पहुँचाती है । ऐसे श्राध विचार हैं जिनके माध्यम में
 विवकी मनुष्य श्राध की श्राधी का विचार करते हुए क्षमा मात्रा की
 तरण ग्रहण करन का उद्यत हो सक्ता है ।

साजकन दुनियाँ में इसकी भरपूर आवश्यकता है। हम
 माता के समान दूरी तार में घोर परलोक में गुम हो जाती है।
 की हमारा क्षमा हम का हू पाया करना चाहिए।

हम प्रथम में एक महारथ की बात हमें नहीं भूतानी चाहिए। दुः-
 लाम बुर्जाली ज्ञानागत अथवा पमजारा को दिशा के लिए
 दरद का उपयोग करते हैं। यद्यपि उनके हृदय में विश्वास के प्र-
 भवितर शोध की अग्नि जलनी है उनके हृदय का शोध निरूपण अति
 विना धुएँ की अग्नि की तरह रहता है। इसलिए जैन साधकों का अ-
 न उस व्यक्ति को पारलोक में समायाला नहीं माना है। इस अणु के
 विकृत पदस्थ जीवा को ध्यान में रखते हुए कुछ मर्मोदायों हैं।
 गृहस्थ साधन सम्पन्न है और उसका समक्ष दृष्टि गुर घोर शास्त्र पर
 आजमग्न हो रहा है मुक्त की आज्ञाओं गवरे में पड़ रही है न्याय की
 पण्डित करते हुए अत्याचारी आज्ञाओं आगे बढकर मत्पुत्रवा और
 महिसात्मक प्रवृत्तियों को विनाश करने को तयार है तथा स्थिति में
 समय व्यक्ति यह कहने लगे कि मैंने क्षमा भाव धारण कर लिया है तो
 वह क्षमा शब्द का दुरुपयोग है। उस समय श्रावण का वक्तव्य होगा कि
 यह अपनी पूर्ण शक्ति लगा कर अयाय का अस्त्र शस्त्र आदि का गन्तार
 तार भी प्रतिवार करे। यह अंत करण में दया धारण करने वाला
 श्रावण सब प्रथम इस बात का ध्यान रखेगा कि उम कठोर पथ पबदन का
 प्रयत्न न करना पड़े किन्तु जब यह माग अवरुद्ध हो जावे तो उम अंगुना
 को टैला कर भी निहालने का तरीका स्वीकार करना होगा। नीतिवाक्या
 युत में आचार्य सोमदेव न कृता है कि—क्षमा भूषण यतीनाम् न
 तु भूपतीनाम्—यह क्षमा सब परिग्रह रण्य करने वाले दिग्म्बर
 अनिया का भूषण है अविन शास्त्र तेज सम्पन्न शासक के लिए उस
 अंगार नहीं है। उस योग्य देव काय परिधिर्षति का दखनर दुष्टों को
 पण्डित करना होगा उनका निग्रह करना होगा तथा सज्जा का

मायुष्या वा घोर धम ॥४॥ का ह्य उच्यते उपाय म माभवा कथा
 होमा । अत नरानो न पृथग्भित्तुं घाति न घम्य सत्य का प्रयाग विधा
 ३ कर्त्तव्य स्यात् वा क्षमा एव दिव्य माया म दृष्ट है । वा निरपराध
 निरीर घाति क विन्दु कगेर पद्वि का नो घनावेण विन
 नित्यवर्ति विना ये मायाय घोर मन्त्रो का रक्षा क विण बहु धपना
 नत्रवार से जग नही मनन म्मा घोर अहसन परने पर जग (मन्त्र)
 वा राधा न शक्य । मात का मरणात् करन क विना स्या वा ददा
 मन्त्राणा म्मात् है ॥४॥ अनाथाय से कदा है वि दुग्धभाया लावा
 धपय नानुधाया । ॥४॥ क भय म काम ननता मनन मास ॥४॥ नही
 आता है । बतनात नमय म आ इराचार भ्रष्टाचार घोर पापाचार का
 क द्द हो म । ३ उमरा कारण दष्ट ना क का गिधिनता ३ घोर य
 क्कतार ॥४॥ क क घना ॥४॥ का घिमानर धपवा मनायुग
 दृष्टि बनान है ॥४॥ धम दृश्य का धपय का गम्ता छोड़कर ध्याय
 का मध्यम घोर मन्त्रात् करन क विना घा न म्मा है घोर इग पाप
 क विण उ यन उपाय का धमय हान पर बहु क्षात्रधनि क विण भा
 महा राकता । कहने का तात्पर्य यह है कि माधु प्राणी मात्र पर क्षमा मात्र
 प्राणा कर्त्तु है विन्नु मोहित विन्दुवारिदा वा ममानने वाग् दृश्य
 का गम्ता हुमग ३ । धार ॥४॥ दृश्य धन पर से घोर कुम्बी उभा
 न धाय धमागी गिजाता है । धार का नोजवत् धाना स्या का धम
 मन मात्रा विना घाति कुम्बी उभा का परमाणु करन ये मसार महा
 कम्ता है विन्नु क्क हुमर एमर पाया क धार करन वा क्षमा मुनि घोर
 महा सार गिजाता है यह सारा घाता नो है । विभुत् हून् म
 पाप का मासन नही बनता घोर वा धन ॥४॥ धन का ॥४॥ धमा वा
 धनुमानन म्मारान कम्ता है बहु दृश्य हान मुमा धमय घाति प्राणिनों
 पर क्षमा मात्र रखेगा घोर बहु भाधना करण कि उमक उ दन म तेमा
 विधि घाय वि बहु मना मुनि धनयु वा धिया की प्राणु कर मन
 सवन काय घोर ॥४॥ काशन तथा प्रथमा ना क इरा विधा

को ध्यय कष्ट तथा तकलीफ न द बल्कि उमरे जीवन के माध्यम से सम्पूर्ण प्राणिया का अभय आनन्द और शान्ति तथा सन्ताप प्राप्त हो । इस विवेचन से कोई यह न समझे कि शोध तो मित्र तथा अच्छी चीज है । वह तो गन्तु ही है उसका विनाश करना जीवन का एक मात्र लक्ष्य होना चाहिए क्योंकि शोध का विनाश कर विना धम का बन् बक्ष नहीं बन पाता । क्षमा गन्तु पृथ्वी का वाचक है । भार के लिए जमीन चाहिए भवन निर्माण के लिए जमीन चाहिए । इसी प्रकार रत्नत्रय के दिव्य प्रासाद के लिए शमा रूपी जमीन चाहिए । उम परिगुड और पवित्र भूमि पर अवस्थित आत्म गुणों का उत्तुम प्रासाद अप्रतिम सौन्दर्य से सम्पन्न होता हुआ अविनाशी आनन्द और शक्ति का प्रदाता बनता है । जिन आत्माओं ने आत्मा का विवास किया है उहाने शोध का परित्याग कर भगवती क्षमा की प्राणपण से आराधना की है । यह क्षमा संपूर्ण सिद्धियों की जननी है इसलिए जो ध्यवित्त अपना आत्मा की सच्ची शान्ति देना चाहते है उनकी अपने हृदय में क्षमा की स्थान देना चाहिए । कुछ लोग मांस मछली भण्डा खाते हुए, गिवार खेलते हुए और जीवों का वध करते हुए भी बाणीयों द्वारा क्षमा की बहुत गुत्तर एकित्तग करते हैं, अहिंसा और अभय का अभिनय त्रिसात है । यह चीज ठीक नहीं है । जीवन में कष्टनामयी प्रवृत्तियों के आधारात्मक प्रवण के बिना सही अथ में क्षमा का प्रवेग नहीं होता । त्रिस्व क्षमा का नाक दिसावा कर सकता है असली क्षमा का आनन्द लेन क लिए नाक की प्रवृत्तियाँ मय मांस आदि से रहित हा कष्टनामयी हानी चाहिए । इस क्षमा का साक्षात् सरस्वती भी पूणतया वरण नहीं कर सकता है ता उसका क्या अधिक याख्यात किया जावे । सन्नेप में हमारा ये ही कहना है कि काध विनाच से पिण्ड टुडा कर क्षमा का पथ पाडा । उमसे जीवन सुखी शान्त और समृद्ध बनगा ।

उत्तम मार्दव धमे

मान्य वा अथ मृदुता है। मृदुता के माने कोमलता अर्थात् बठारता न हा। बठोरता अभिमान व बारण घाती है। अभिमानो मनुष्य वा मन अपन अह म इतना बठोर हो जाता है कि वह अपन समथ किमी को कुद्द गिनता नही। दूसरो वा नुच्छ गिनता है और अपन वा हर सामन में बडा। ऐम व्यक्ति वा स्वभाव बन जाना है—म म करन का। में ऐमा हूँ म वमा हूँ। किन्तु जो म्ग म म करन है एसा अभिमाना व्यक्त बभा जावन म सफलता नहा पाता। म म करने वाला बकरा कसाई व हाथा अत्यु प्राप्त करता है कि तु मना पक्षी म ना म ना करन व कारण लागो का प्रेम और घात्र पाता है। रावण बडा अभिमाना था। उसे उमकी पटरानी मन्दारो ने समभाया— नाथ ! परस्था का अग्रहरण करव घातने अछा काम नही किया। आप साता को उमक पनि राम व पाम लीग दीजिए और राम स सधि कर तीजिए। यह मुनकर रावण मन्दारो पर अत्यन्त अ ड हाकर बोला—तू मुझे राम का भय दिखाती है। वहाँ त्रिवण्णधिपति मे और वही बन बन मूमने वाला राम। तू मुझे ही उपने्य देनी है। उसने भाई विभीषण ने उम समभाया तो अभिमान म टूटे हुए रावण ने उम अपन राय स ही तिकाल दिया। किन्तु इसका क्या परिणाम निकला ? रावण लक्ष्मण व हाथा मारा गया। सीता लेना पडी राय गया और ससार म वह अपयग का भागी हुआ।

अभिमान विनय गुण का विघाता है। विनय के बिना मनुष्य म धम की पात्रता नहा घाती। जब तक हत्य मे कोमलता नही बलिक बठारता है विनय नहा अहकार है गिनप्रना नही उदतता है तब तक न ता उमे गुरु कुत्त सिता सकत है और न सीमा हुआ उमक चित्त

मे शर सना है। वास्तव मे धम का प्रारम्भ विनय से होता है। सम्भारान सम्भारान सम्भव चारित्र्य की विनय और उपहार विनय नम प्रहार धार प्रहार की विनय है। इस विनय के वाङ्मय ही मनुष्य के मन मे देव गान्धर्व-गुरु और धम के प्रति शर के भाव पैदा हो जाते है। द्रोणाचार्य के पास यीश्व और पाण्डव राजकुमार गान्धर्व और गान्धर्व की शिक्षा प्राप्त करत थे। धनु न गुरु की बड़ी विनय करता था। प्रत प्रसन शर गुरु उठ विनय रूप मे धनुर्विद्या सिगाने थे। दुर्योधन गुरु के प्रति उदण्ड रहता था। वह चान्ता था कि गुरु जी धनु न के प्रति विनय पक्षपात करते है मुझे उसके समान धनुर्विद्या रखा नहा सिगाने। जब यह विनयत धार धार करत उगा ता एर शर द्रोणाचार्य गान्धर्व - दुर्योधन। विद्या विनय से शरती है शौद्धय से नही। मुझे धनु न की विद्या से ईर्ष्या है किन्तु धनु न के गुणो मे—उसकी गुरुभक्ति और विनय से क्या ईर्ष्या नही करता। मुझे विनय नही था शरती और मुझे कभी धनुर्विद्या भी नही था शरता।

वास्तव मे विनय सर्वोत्तम गुण है। विनयी सभी का प्रिय होता है। सभी उस चाहते है। सभी उसकी प्रशंसा करते है। वास्तव मे यहा है—

विणउ सासन मूल, विणउ णिव्वाण साहगो।

विणउ विप्पमुवकस्स काउ धम्मो काउ तवो ॥

विनय शासन का मूल है विनय निर्वाण नम वाला है। जिसने विनय नहीं है उसका धम और तप व्यर्थ है।

विणउ नाण नाणा दनण,

वसणाउ चरण, चरणहुति मोक्खो।

अर्थात् विनय मे ज्ञान पान से दान दान से चारित्र्य और चारित्र्य से मोक्ष प्राप्त होता है।

मन्त्रिण पीनर नगा चढ़ता है, उस समय मन्त्रिण पीने वान को धपना हाग नहीं रहता और यद्वा तद्वा वाय कर बठता है। इसी प्रकार जिसको अभिमान होता है वह भी एक नौ में रहता है। उसे सत् प्रसन्न का कोई विवेक नहीं रहता। विवेक रहता वह अभिमान कर ही कर्मों। विवेक नहीं रहता इसलिए तो वह अभिमान करता है और जब विवेक नहीं रहता उस दिना में वह जो भी वाय करेगा वह सब उसके धार्म हित के विरुद्ध ही होगा। उस समय वह धार्म-कल्याण की कोई बात जान भी नहीं सकता है। अत मान का मन् की सजा दी है और उसके घाठ भेद किये गये हैं—

गानमद पूजामद कुन्मन् जातिमद बलमन्, अङ्गिमद तपमद शरीरमन् ।

ज्ञान मद

अल्पज्ञानी मनुष्य अपने तुच्छ ज्ञान पर अभिमान करता है। वह अपने आपको महा ज्ञानी मानता है और दूसरों को तुच्छ और अल्पज्ञ समझता है।

यदा किञ्चिज्ज्ञो ऽ ह द्विप इव मदाथ समभयम्,
तदा सवज्ञो ऽ स्मीत्यभवदवलिप्त मम मन ।

यदा किञ्चित्किञ्चिद बुधजनसकाशादवगतम्,
तदा भूर्सास्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगत ॥

अर्थात् जब मुझको थोड़ा सा ज्ञान हुआ तब मैं हाथी की तरह मन् स धपा हा गया और यह समझने लगा कि ज्ञान में मुझमें कोई अधिक् नहीं है। परन्तु जब विद्वानों की संगति में मुझका कुछ अधिक् ज्ञान प्राप्त हुआ तब मुझका ज्ञान हा गया कि मैं मूर्ख हूँ और मेरा मद ज्वर व समान उतर गया।

यास्त्र म ज्ञान का सागर अगाध है। इसमें टुबका नगाकर कोई एक लाख भरलाना है कोई एक घण्टा भर वाला है। फिर इन ज्ञान जल का सागर इनराना कि मर पास जितना ज्ञान जल है उतना समार म किमी क पाग नदी यह निरी अज्ञानता है। ज्ञान पर जो मर किया जाता है वह ज्ञान का अपराध नहीं। यत् ता मर करने वाले का क्षय है। भवृष्टि न इसका जितना मुन्दर मनावैज्ञानिक कारण लिया है। वे कहते हैं—

ज्ञान सतां मानमदादिनाशन,
केयाचिदंतमदमान - कारणम् ।

स्थान विविधत धमिनां विमुक्तये,
कामातुराणामतिकाम-कारणम् ॥

धर्मान् सन्तुष्टयों को ना ज्ञान मान मरानि का नाग करने वाला है और दुखना को बड़ा ज्ञान मर और मान का बढ़ाने वाला है। जैसे एकान्त स्थान योगिया की तो मुक्ति के निर है किन्तु कामानुरा को धर्मल काम उत्पन्न करने वाला है।

ना नारा न कहा है—

अज्ञ सुप्तमाराध्य सुप्ततरमाराध्यते विशेषज्ञ ।
ज्ञान सय दुर्घिदग्ध ब्रह्मापि त न रजयितु समय ॥

धर्मान् मूल का धामाना म समभाया जा सकता है। विज्ञान को उतम भी धर्मिक धामाना म समभाया जा सकता है। किन्तु धाडे म ज्ञान क मर म विमूढ हुए सागा का श्रुता भी प्रसन्न करने म समय नहीं है।

ममार म विशा है। अगा मायनामा का नकर कदापुह धल, र
है। का लहर दास्त्राय हान है। धर्मों क नाग

पर माना प्रकार का मायताये और सिद्धांत मगर ये प्रबलित हो
 रह हैं। यह सब जानम व जीन जागने नमून हैं। जानम के कारण
 हा भगवान महाकार के समय में भी स्वयं महाकार का प्रचार सब
 और सबकी मानन धार गिह्या ने स्वयं मत और सिद्धान्त निगत
 हैं। और महाकार का स्वयं के अपने विषय में माना प्रकार व समझारा
 का प्रकार किया था। भगवान ऋगभद्र व काम में स्वयं उनका और
 और धनवनी भक्त के पुत्र मरीच न मिथ्या सिद्धांत गढ़कर प्रचारित
 विषय थे। इनका कारण उनका यही जानम था। जब मनुष्य में यह
 महानर भर जाता है कि मैं सबसे बड़ा विद्वान् हूँ दूसर सब मूर्ख हैं।
 तो वह अनेक प्रकार की गई मायताये दूसरा पर धारण का प्रयत्न
 करता है। जानम ही वस्तुतः बीडक पागनपन है। मनोविज्ञान व
 विद्वान् वक्त ह कि यदि कोई मूर्ख पागन हो जाय तो वह अधिक्
 में अधिक् दूसरो का शारीरिक कष्ट रगा या धारम हस्या कर रगा।
 किन्तु यदि जानम में उद्भाग का विद्वान् या बुद्धिमान् पागन हो
 जाय तो वह अपने सामान-सकुचित ज्ञान से ही अनर व्यक्तियों का
 माग भ्रष्ट करके उनको अपार क्षति पहुंचाता है। वह क्षति ऐसा होता
 है जिससे उनकी आदमा सिंघ्रान्त हो जाता है ये मिथ्या मायताया
 और मिथ्या विश्वासों के चक्र में फस जाते हैं और फिर वहाँ में उनका
 तिय बान्त्र निरुलता कठिन हो जाता है।

इसलिये कहा है—

मान रे मानव मान बुरी,
 मतिमान गुमान न मान न नोकी।
 मान किये अपमान लहै,
 न विमान लहै चर देवपुरी की ॥

व्यक्ति का अभिमान तो नहीं करना चाहिये किन्तु स्वाभिमान कभी नहीं छोड़ना चाहिये। स्वाभिमान का ज्ञान पर व्यक्ति में शैलीना का जानी के दानना ज्ञान पर व्यक्ति का गुण प्रभावरहित नहीं जानते हैं और मनुष्य यात्रक बन जाता है। उसमें उसका आत्मा कुटिल नहीं जानती है। दूसरे का प्रभाव मर्म श्राकर धर्म भाग का भाग दान देना है और दूसरे का श्रय और गुण का मुदय समझकर श्रयगार बन जाता है। यह स्वाभिमान ही है जिसमें व्यक्ति अनुचित काम नहीं करना अनुचित प्रभाव का स्वीकार नहीं करना अनुचित बात को नहीं मानना। कुल मिलाकर वह अनुचित से समझना नहीं करता और उचित में गुरुज नहीं करता। अतः स्वाभिमान करना उतना ही आवश्यक है जितना आवश्यक अभिमान का त्याग करना है। क्योंकि स्वाभिमान श्रमा का उदक गुणा का स्वीकार है जबकि अभिमान स्व का भूतकर पर का अपना मानकर किया जाता है।

अतः विवकी व्यक्तियों का ज्ञान का मर्म कभी नहीं करना चाहिये। यदि कभी मन में अपने ज्ञान का सम्बन्ध में श्रद्धा की भावना श्राव तो व्यक्ति का साधना चाहिये—दण्ड प्रनाति का न से प्रज्ञान और कुशान का कारण तू समार में भ्रमण कर रहा है। तुम्हें कभी सम्यग्ज्ञान का प्राप्ति नहीं हुई। यदि सम्यग्ज्ञान प्राप्त हो गया होता तो तुम्हें ज्ञान पर अभिमान न आता। तुम्हें अपने तुच्छ ज्ञान पर अभिमान है इसी में ज्ञान होता है कि तुम्हें सम्यग्ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। फिर ज्ञान तो अनन्त है। समार में जिनके पत्नय और उनका पर्याय है व सब ज्ञान का विषय है व जय है। पत्नय और उनका पर्यायों का अनन्त नहीं। अतः ज्ञान का भाग अनन्त नहीं। रती विद्या की बात। भाग समार व विद्याओं अनेकों हैं। उन विद्याया सम्बन्धी श्रय अनकों हैं। समार में भाषायें अनेकों हैं। उनमें अलग अलग विषया की पुस्तक अनका हैं। तू साच तुम्हें कितना भाषायें जानी हैं और कितने विषय जानते हैं। उन विषया का भाग क्या सार श्रय तू न देखते हैं।

जब थोड़ी भी भाषाभाषी और विषय का भी तू पूरा तौर पर नहीं जानता तो तसार से इनने विषय हैं इतनी भाषायें हैं कि यदि तू अन्तर्गत जीवन उन्हें जानने में लगा द फिर भी तू उन सबका जानकार हो गया यह दावा तू नही कर सकता फिर तुझसे अधिक विद्या क स्वामी तो मगर से आकर लाग हैं। तूने ध्यान को सबसे बड़ा विद्वान् हम मान लिया।

पाश्चात्य सम्प्रदाय से प्रभावित कुछ लोगों में एक और ध्यान बन पड़ा है। वे आधुनिक विज्ञानियों को सबसे मानते और उनके मुकाबिल सबसे भगवान् और उनकी वाली जैनागमों को तुच्छ समझते हैं। वे सब से आधुनिक विज्ञान की उपरिस्थियों को सबके प्रशंसा करते हैं और जिनवाणी का सम्प्रदाय आधुनिक विज्ञान से पिछड़ी और अल्पज्ञान वाली कहते हैं। वे भूल जाते हैं कि जिनवाणी सबसे की वाली है। वह त्रिकाल में भी असत्य नहीं हो सकती। जिनवाणी तो निर्भ्रान्त है, जबकि विज्ञान के आधुनिक परिणाम न तो भ्रान्त हैं और न निर्भ्रान्त ही हैं। फिर भी आधुनिकतावादी जो आक्षेप करते हैं वह भी एक प्रकार का ज्ञान-भ्रम ही है। भ्रम हम सबका सब प्रकार के ज्ञान-भ्रम से बचना चाहिए, सभी हमें सम्प्रज्ञान के ज्ञान ही सबक हैं।

पूजा-भ्रम

जगत् में किसी पुण्य के उदय से जब लोग में किसी की माय्यता, भाव और सम्मान बढ़ जाता है तब वह अकारण ही ध्यान आपको सबसे बड़ा और ऊँचा मानने लगता है। उसमें अहंकार भा जाता है जिससे अपने सामने दूसरा का तुच्छ नगण्य और हीन मानने लगता है। वह इस अहंकार के बशीभूत होकर ऐसे व्यवहार करने लगता है जिससे दूसरों का निरस्कार होता हो। इसकी प्रतिक्रिया दूसरों के मन में होन लगती है और वह उस व्यक्ति के सम्बन्ध में आदर की बजाय घृणापूर्ण धारणा बना लेता है। इसी प्रकार और लोग की धारणा भा बनाने

संगती है। साग उभ घमण्ठी कहकर तिरस्कार करने लगते हैं उमरी उभेगा करने लगते हैं। और एतन्नि पूजा के गिर पर विराजमान उस व्यक्ति का लोगो की दृष्टि में पवन हो जाता है। सब साग कहने लगते हैं—देना ना घमण्ठी का गिर सग मीचा हाहा है।

दूसरा स पूजा पाकर, घांर और श्रद्धा पाकर इतराना क्या ? वह ता पूव जम के पुण्य का फल है। जब तक उस पुण्य का उतय है वह पूजा मिलगी। जब पुण्य क्षीण हो जाता है तो दूसरो स घांर भी नहीं मिलता। वह सबकी निगाह में गिर जाता है। यानि उम पुण्य का सुरक्षित रखना है और बढ़ाना है ना घपन घांरको घमण्ठ किनघ बनाना चाहिए। घमिमान करने स वह पुण्य क्षीण हो जाता है।

कुल-भद

मनुष्य उच्च या नाच कुल मे जम सता है वह घपन पूवकुलजमों के अनुसार लेता है। ममे किशा व्यक्ति के बामान पुरपाथ स कोई घठर नहीं घाता। यानि पूव जम के जमों के अनुसार प्राप्त कुल उच्च हुमा ता उम पर घमिमान करने ग उमका उच्चता की मारी महता समाप्त हो जाती है। उच्च कुल प्राप्त हुमा ता उमका साभ ता यह था कि मध्यमगत प्राप्त करके किनद भक्ति मे घपना उपयोग मगामा जाय। जब कुल का मन् मन मे घाव ता माचना चाहिए कि मिन घनाति वाग ग निघ कुलो म घमण्ठ बार जम लिया है। कभा निय न बना कभा निगा की गान मे गया कभी नरक के दु म भाव। किन्तु उस समय कुल का मन् वही गया था जब निघ कुल म जम लिया था और सब नेरी निगा करने थ। अब तुमे पुण्य याग म उत्तम कुल मितता है ता तुमे उमका मन् करना क्या उचित है।

जाति-भद

इगा प्रकार यानि पुण्य याग मे उत्तम जाति मिल गई ता उमका भा घमिमान करना उचित नहीं कहना सकता। तुमे ममण्ठ बार

एवेन्द्रिय न मरुत घमसा तंभन्त्य या रम्भपर्वानन मनुष्य वनन
 नीच जाति मित्रो । भव कृद्ध सुकृत व याग स मनुष्य जाति मय्य वनने
 वा भवमर प्राया है । तत्र उत जाति वा ही घमिमान करने उमने
 साम उठाने वा भवमर गवा र्ना बही मुगता है । उत्तम जाति प्राप्त
 करके उत्तम वाय करना चाहिए । नाच कम किया ता उत्तम जाति
 प्राप्त करने का क्या साम रहा ? नाच कम ता मीन जाति प्राप्त करके
 भा किया जा सरना था । जानाय भ्रतवार एक प्रसार का नीच कम ही
 है । घन उत्तम जाति का गौरव विनम्रता धारण करने मे है, न कि
 उमका प्रहसर करने मे ।

बल-मद

पुण्योन्म मे यदि शरीर मे बल प्राप्त हो जाता है ता उस बल व
 कारण व्यक्ति को प्रह्वार हो जाता है । वह अपने भाषको समार मे
 सबसे अधिक बलवान समझता है और दूसरों का निर्बल समझार हान
 दृष्टि से देखता है । किन्तु ससार मे बल की कोई सीमा नहीं है । व्यक्ति
 का यह सोचना चाहिए कि संसार मे एक से एक अधिक बलवान-बने
 बने बली उत्पन्न हुए लेकिन उनका भाज नामो निगान बाकी नहीं
 रहा । ससार के सभी व्यक्तियों मे भद्र चरी नारायण बलवान होता
 है और वह अपने बल के द्वारा भरत क्षेत्र व तीनों सण्य पर विजय
 प्राप्त करता है । उनसे भी अधिक बलवान चन्द्रवर्ती होता है । वह छद्म
 सण्य पर विजय प्राप्त करता है । उनसे अधिक बलवान इन्द्र हाता है और
 अनक इन्द्र के बराबर तीर्थक्षुरा मे बल होता है किन्तु ससार मे न
 भद्र चरी रह और न चन्द्रवर्ती । अनक इन्द्र हुए और वे भी चले गये ।
 इसलिए कहा है कि—

कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरत सड सारा
 कहीं गये वह राम व लछमण, जिन रावण मारा ।

कहाँ कृष्ण रश्मिणि, सतभामा, अरु सपति सगरी ।
 कहाँ गये वह रगमहल अरु, सुवरन की नगरी ।
 नहीं रहे वह लोभी कौरव, जह्न मरे रन में ।
 गये राज तज पाडव वन को अग्नि लगी तन में ।

त्रिम समय बाहुबलि स्वामी का एक साधारण विबल्य के कारण केवलपान प्राप्त नहीं हो रहा था और वह विबल्य यह था कि म त्रिम भूमि पर सदा हुआ है वह भरत की भूमि है । यह वान चक्रवर्ती भरत को मानुस हुई । व बाहुबलि मुनिराज के निकट आये और विनम्रतापूर्वक प्रणामों में नमस्कार करते वान—भगवन् यह भूमि भरत की नहीं है । यहाँ मुझ जैसे अनेक चक्रवर्ती हो चुके हैं लेकिन आज उनका नाम उप भी नहीं है । जब मैंने पशुपत विजय करके सुप्रभावत पर्वत पर अपने अस्तरण से विजयी सम्प्राप्त में अपना नाम लिखना चाहा तो मन यह दया कि वहाँ पर नाम लिखने योग्य स्थान नहीं है । तब मेरे मन में यह विचार जागृत हुआ कि इस पृथ्वी का विजय करने वाला सबप्रथम मैं ही नहीं हूँ बल्कि मुझसे पहले अनेक चक्रवर्ती हो चुके हैं । उनमें से भी बहुतों ने नाम लिखने का प्रयत्न किया तो उन्होंने अपने किसी चक्रवर्ती का नाम मिला कर अपना नाम लिखा । मने भी एक चक्रवर्ती का नाम मिलाकर अपना नाम लिखा । अनेक भरत आय और चरे गये लेकिन पृथ्वी जहाँ की नहीं चल ।

वास्तव में व्यक्ति इन विधानों के कारण मनुष्य के समान है । वह अपनी अहता के कारण मनुष्य नहीं है बल्कि वह मनुष्य अपने गुणों के कारण हो सकता है । उनमें सबसे बड़ा बाधक है अहंकार । इमतिण व्यक्ति को अपने बल पर सभी अभिमान नहीं करना चाहिए ।

ऋद्धि-मद

ऋद्धिया किया मुनि का महान् तपस्या करने के बाद ही प्राप्त होती है । किन्तु तपस्या के द्वारा प्राप्त ऋद्धियों पर जा, भी मुनि

अभिमान करता है उसकी तुच्छता की सीमा नहीं है। तपस्या ब्रह्म पुण्य का फल है और काम की निजरा का कारण है। समाज में आज तप जितने हुए हैं और हागे व सब तपस्या के कारण ही भोग की प्राप्ति कर सक है। किन्तु व्यक्ति तप का उपयोग काम की निजरा में न करके ऋद्धि प्राप्त करने में करते है। वे रत्न देख कर कांक्ष स्वरीण्य हैं। जिसके द्वारा सीता लोच की गमस्त आत्मिक सम्पत्ति प्राप्त हो सकती है उमम के केवल साधारण ऋद्धि प्राप्त करने का प्रयत्न करते है और उसे प्राप्त करके फिर उनको अहकार हो जाता है। तेष भी महान् तपस्वी होते है जिन्हें तपस्या के फल स्वरूप सहज ही ऋद्धि प्राप्त हो जाती है और उन्हें उन ऋद्धिया का भान तर नहीं होता। क्योंकि ऋद्धि की प्राप्ति उनका लक्ष्य नहीं है उनका लक्ष्य तो उसमें भी महान् और उच्चतर है। मुनिराज विष्णु कुमार को जब ब्रह्म रात्रि में एक क्षुल्लक ने यह सूचना दी कि हस्तिनापुर में ७०० मुनियों का जीवित यज्ञ किया जा रहा है और उनकी रक्षा बचल आप ही कर सकते है तो विष्णु कुमार नहीं समझ सके कि मैं इतनी दूर कैसे पहुँच सकता हूँ। तब क्षुल्लक ने उन्हें स्मरण दिलाया कि उनके विजिया ऋद्धि की प्राप्ति हो चुकी है। विष्णु कुमार को इतने पर भी विश्वास नहीं हुआ और उन्होंने

हाथ बड़ाकर प्रेक्षा। वह
विजिया ऋद्धि सिद्ध
वास्तव में ऐसे
किन्तु समाज में कुछ
मान ही जाता है और
विनाश करते हैं। अतः
चाहिए।

मझे

इसी प्रकार अपनी
मन करना आत्म हत्या

का कारण है। उसी तपस्या पर प्रह्वार करके कर्मों का बन्ध करना किमा प्रकार उपास्य नहीं हो सकता। घनक तपस्वी तपस्या से पाप घोर अनुग्रह का शक्ति प्राप्त कर सक्त हैं। उन्हें मेधावत्या का सिद्धि हो जाती है। शास्त्रों में ऐसा कई उपास्यगु ध्यात हैं जबकि तेमे तपस्वी ने क्रोध करके दूषणों का धार किया घोर स्वयं भा नरक का पात्र बना। द्वापायन मुनि ने उक्त कता में प्राकर द्वाका का दाह कर दिया। उनही उक्त तपोवत्या से मारा द्वाका तो मरम हो हा गई साथ ही वह भी उक्त घनि में तप कर घोर उरुह नरक में जाता पदा। घन तप का उपदाय बवन धारम कस्याण से करना शक्ति घोर उक्त पर किमी प्रकार का धमिमान नहीं करना शक्ति।

गरोर-मद

गरोर की मुद्रता घोर कुर्याता गुम या अगुम नाम कर्म के उपाय से प्राप्त होती है। गरोर का मारी रचना नामकम से ऊपर ही निर्धार है। उमा पूष पुष्य से याग से गरोर मुद्रता घोर बनवान बनना घोर अगुम कर्म के उपाय से गरोर ध्यन्त कुर्यात सिवता है। उपासित कर्मों का शक्ति प्राप्त हमारे ऊपर नहीं है। किन्तु उक्त कर्मों से घात्र हम निम्ना ग्रहण कर सकते हैं घोर घन धारका अगुम प्रकृतिया से बचा सकते हैं। किन्तु पूष कर्मों के कारण जो बनवान गरोर किया है उक्त पर धर्म मान करके हम गुम कर्मों की महता का समान कर सते हैं। गरोर के बाह्य रूप पर ही हमारी इष्टि उतनी है। किन्तु यदि हम गरोर के स्वरूप पर विचार करें ता यन् समार से सबसे अधिक ध्यन्त पूजा उपासक अर्थात् अगुमों का भण्डार है। इमनिण किमा उक्त धारक से बन्ना है कि—

आदमी का जिस्म क्या है जिस पे शबा है जहाँ
एक मिटटी की इमारत एक मिटटी का मर्वा

गारा इसमें रून है और ईंट इसमें हड्डिया
चन्द सासो पर लडा है यह लयाली नूरो शा
जो न होती इससे उपर चाम की चादर मडी
तय तो इसको बाग कुत्ते नोचते हर हर घडी

रून हड्डी मनुष्य प्राणि अथावा पदार्थ इन कमरी मे डक हुए हैं ।
य पशु बाहर शिगार्द तो एमें बहुत प्राणि जानी है और उठी
अपवित्र पशुओं की बनी इस देह पर हम अभिमान करे यह किन्ती बडी
मूल्यता है । इसीलिए कहा है कि—

तू नित पोख यह सूख ज्यो, धोष त्यो मंली ।
निश दिा करे उपाय देह का, रोग वशा फंली ।
मात पिता रज बीरज मिलकर, बनी देह तेरी ।
मास हाड नश लहू राध की, प्रगट व्याधि घेरी ।
काना पौंडा पडा हाथ यह चूसै तो रोवै ।
फलै अनन्त जु धर्म ध्यान की, भूमि विषै बोवै ।
येसर चवन पुष्प सुगधित, वस्तु देख सारी ।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी ।

रौर तो इतना अपवित्र है यदि एक बार कपडे को पहन लिया जाय
तो उम कपडे को दूमरा नहीं पहन सकता क्योंकि वह अपवित्र
जाता है । यह दारो नो प्राप्तव म नरक को मान है और उस
न को इस खान पर अभिमान करना सर्वम उनी मूल्यता है । एा
इ ने कहा है कि—

उदर में नरक, अधोद्वार में नरक,
कुचन में नरक, नरक भरी छाती है ।

कठ में नरक, गाल चिपुक नरक त्रिच,
 मुग्न में नरक जीन लाल हू घबाती है ।
 नाक में नरक, श्रांस कान में नरक बहे,
 हाय पात्र नल शिष्य नरक दिखाती है ।
 सुदर कहत नारी नरक की कुण्ड यह,
 नरक जाय पडे, सो नरक पाती है ।
 कामनी को अङ्ग अति मलीन, महा अशुद्ध,
 रोम रोम मलीन, मलीन सब द्वार है ।
 हाड मास मज्जा मेद, चामसु लपेटो राखे,
 ठौर ठौर रक्त के नरे ही भण्डार है ।
 मूत्र हू पुरोष आत एकमेक मिल रही,
 और हूँ उदर माहीं, विविध विकार है ।
 सुदर कहत नारी नखशिष्य निन्दा रूप,
 ताही जो सराहे, सो तो बडा ही गवार है ।

अत्र विभी प्रकार का अभिमान या मत् करना अथवा * । उमाता
 मन्था त्याग करेना चाहिए ।



उत्तम आर्जन र्म

आत्मा का स्वभाव मरना है । पर वस्तु के मत्प्राप्त्य अ
 आत्मा न नियन्त्रिता अज्ञान है । और मायाचार नियन्त्रित गति
 जान चारा है ।

परत रहते हैं। हम अपने प्रति और दूसरा के प्रति मायाचारी का व्यवहार करते हैं। किन्तु जम सग का स्वभाव टेढ़ा चरन का है परन्तु जब वह विन म जाना है ता सीधा हा जाना है। हम स्व मसार म भने ही मायाचार करके तिरछ चलते है किन्तु यदि हम मिदानय में पहुचना है तो हमे सरल बनना ही पडेगा।

हम इन्द्रिय विषयों का लम्पटता व कारण दूसरा व प्रति मायाचारी करते हैं। हमारे मन म दूसरा का ठगने का प्रारम्भ सन्ताप हाता है किन्तु यदि विचार किया जाय ठगने के उपाय
 ठगते अपने भाप को ही ठगने
 मायाचारी की भावना पैदा होत
 है। हमारे मन मे एक धर्म
 समझत है कि हम जो कुछ
 भी हम दूसरे को ठगने का
 गुणो व घात व स्वयं कार्य
 प्रतिक्रिया दूसरे व मन
 मन मे हमारे प्रति
 साथ वही प्रकार का
 प्रभाव दूसरे के मन पर

एक नगर म

उसने

गिर गय

अपन हाथ

लेखकर यह

क्रिया

विचारों को फामी देनी चाहिए। दूसरे दिन रात्रि फिर उमा रात्रि में निरला घोर लोको मित्रों के मन में उमी प्रचार की भावना उत्पन्न हुई। रात्रिमहल पहुँच कर राजा ने अपने मंत्री से पूछा कि चन्दन का व्यापार मरा अभिन्न मित्र है लेकिन उस दन्तकर मरे मन में यह भावना क्यों पैदा हो जाती है कि उम पाया की मन्त्रा देनी चाहिए। मंत्री बद्धिमान था उमने उम व्यापार को बुलाया और उम अभयान का आश्रयन कर पशान्त में पूछा कि तुम मय मय बताओ जब राजा सुम्नगे दुवान के सामने गनिवने था ता सुम्नगर मन में क्या भाव पैदा हुआ था। व्यापारी ने उमने २ कहा कि मरे पास चन्दन का बहुत बड़ा स्टॉक है लेकिन इसका भाव गिर गया है और मुझे नुकसान हो रहा है। मरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ था कि यदि राजा मरे साथे तो मरा चन्दन अच्छे नामों में बिके। मन्त्री ने उमका शारा चन्दन लकीर कर मगवा लिया। धरन दिन जब राजा व्यापारी की दुवान के सामने गनिवना तो ने व्यापार के मन में राजा के मरने की भावना थी और ने राजा के मन में व्यापारी को फामी देने का विचार था लेकिन लाना के मन में पूर्ववत् मित्रता का भावना थी। वास्तव में उमने विचारों ने—परिलामा ने राजा पर प्रभाव डाला था।

श्रिया और प्रतिक्रिया सहज धम है। मनाविज्ञान इसका समर्थन करता है कि हमारे विचारों का प्रभाव दूसरा के मन पर पड़ता है और यदि उमका मनाबल हममें प्रबल न हुआ तो उमके मन के दर्शन में हमारे विचारों की प्रतिष्ठाया पड़नी है। जब हमारे विचार होते हैं वस ही दूसरों के विचार हो जाते हैं। इसलिए जब हम दूसरे का उमका का प्रयत्न करते हैं तो दूसरे के मन में भा हमारे प्रति विपरीत भाव हो जाता है। जब हमारी मायाकारी का पैदा दूसरे का लग जाता है तो वह हमारे साथ ध्ववहार करना भी छोड़ देता है। वह हमारे उमर विचारों महा करता है और इस प्रकार हम उसकी निगाह से गिर जाते हैं। यदि हमारा मायाचार एक व्यक्ति के लिए हो तो हम एक

करते रहते हैं। हम अपने प्रति और दूसरा व प्रति मायाचारी का व्यवहार करते हैं। किन्तु जब सप वा स्वभाव टेढ़ा चलने का है परन्तु जब वह बिन म जाता है तो सीधा ही जाता है। हम इस मसार में भले ही मायाचार करने तिरछे चलते हैं किन्तु यदि हमें सिद्धालय में पहुँचना है तो हमें सरल बनना ही पड़ेगा।

हम इन्द्रिय विषया का लम्पटता व कारण दूसरा व प्रति मायाचारा करते हैं। हमारे मन में दूसरो को ठगने का आत्म सन्तोष हाता है किन्तु यदि विचार किया जाय तो हम परस्पर एक दूसरे को नहीं ठगते अपने आप को ही ठगते हैं। जब हमारे मन में दूसरो क प्रति मायाचारी की भावना पैदा होनी है तो हमारा मन की दान्ति नष्ट हो जाता है। हमारे मन में एक अधभुन कम्पन पैदा होने लगता है। हम स्वयं समझते हैं कि हम जो कुछ कर रहे हैं वह उचित नहीं है किन्तु फिर भी हम दूसरे को ठगने का प्रयत्न करते हैं। और इस तरह आत्मिक गुणों के घात के स्वयं कारण बनते हैं। हमारी इस भावना का प्रभाव प्रतिप्रिया दूसरे के मन में भी होती है और जिसको हम ठगत ह वह अपने मन में हमारे प्रति दुर्भाव रखता है और अक्सर मिलन पर बट भी हमारा साथ इसी प्रकार का व्यवहार करता है। हमारे मन की भावनाओं का प्रभाव दूसरे के मन पर अवश्य पड़ता है।

एक नगर में चन्दन का बहुत बड़ा व्यापार चलता था। एक बार उसने चन्दन का भण्डार खरीन लिया किन्तु दुर्भाग्य से चन्दन का भाव गिर गया। उस नगर का राजा उसका मित्र था। एक दिन जब राजा अपने हाथी पर बठ उधर से निकला तो उस व्यापारी के मन में उस देखकर यह भाव जाग्रत हुआ—यदि यह राजा मर जाय तो इसकी दाह किया व लिए मैं अपना चन्दन अच्छे भावों में बेच दूँ। इस पर जो मुझे हानि हो रही है इसके स्थान पर मुझे बहुत लाभ हो। उधर उस व्यापारी को दन्व कर राजा के मन में भी अचरमात् यह भाव पैदा हुआ

कि व्यापारी को फामी देने का विचार । दूसरे दिन राजा फिर उमा रातने
 ने निवला धीर दोना मित्रों के मन में उसी प्रकार की भावना
 उत्पन्न हुई । राजमहल पहुँच कर राजा ने अपने मंत्री न पूछा कि क्या
 चन्दन का व्यापार मरा अभिन्न मित्र है मन्त्रिय उम दण्डकर मरे मन में
 यन् भावना क्यों पैदा हो जाती है कि उम फामी की मन्त्रा देने का विचार ।
 मंत्री बुद्धिमान था उमने उम व्यापारी को बुनाया धीर उम अभयमान
 था आवागमन देकर लजान में पूछा कि तुम मय मय बनाया जब
 राजा तुम्हारे दुकान के सामने में निकल पठा तुम्हारे मन में क्या
 भाव पैदा हुआ था । व्यापारी ने इतल २ कहा कि मरे पास चन्दन का
 बहुत बड़ा स्टॉक है लेकिन इसका भाव गिर गया है धीर मुझे दुकान
 हो रहा है । मरे मन में मय विचार उत्पन्न आया था कि यदि राजा मरे
 साथ तो मरा चन्दन अच्छे दामों में बिके । मन्त्री ने उमका मारा चन्दन
 खरीद कर मगवा लिया । अगल दिन जब राजा व्यापारी का दुकान के
 सामने में निवला तो न व्यापारी के मन में राजा के मरने का भावना
 था धीर न राजा के मन में व्यापार को फामी देने का विचार था
 लेकिन दोनों के मन में पूषवन्मित्रता की भावना थी । वास्तव में उसके
 विचारों में—परिणामा ने राजा पर प्रभाव डाला था ।

त्रिया धीर प्रतिक्रिया मन्त्र घम है । मनाविज्ञान इसका समर्थन
 करता है कि हमारे विचारों का प्रभाव दूसरों के मन पर पड़ता है धीर
 यदि उसका मनाबल हमसे प्रबल न हुआ तो उसका मन के दर्शन
 में हमारे विचारों की प्रतिच्छाया पड़नी है । जम हमारे विचार होते
 हैं वस ही दूसरों के विचार हो जाते हैं । इसलिए जब हम दूसरे का
 ठगने का प्रयत्न करते हैं तो दूसरे के मन में भा हमारे प्रति विपरीत
 भाव हो जाता है । जब हमारी मायाधारी का पता दूसरे का लग जाता
 है तो क्या हमारे माय ध्वन्धकार करना भी छोड़ देना है । वह हमारे
 ऊपर विश्वास नहीं करना है धीर इस प्रकार हम उसकी निगाह से गिर
 जाते हैं । यदि हमारा मायाधारी एक व्यक्ति के लिए हो तो हम एक

पश्चिमी लिंगा में नतिकता में बहुत पिछड़ा हुआ है। स्थिति इतना शोचनीय हो गई है कि विन्गो में हमारा जा मान जाता है उमर भी लागू मिनावट करने में नही धुवत। मपिन कुछ निम्नान ह और मात दूमरी तरह का भेजने ह। इस तरह दूसरो की दष्टि में भी भारत की प्रतिष्ठा का गिरान का प्रयत्न करत रत ह और उममें कोई लजा का अनुभव नही करत।

जहाँ जिसका जसा अवसर मिलता है, वह मायाचारा करने में धवता नहा। दनीं कपडा बचा लता है सुनार सोने चाँदी में सोन मिलाये बिना ननी मानना। ठेकेदार मडक और दमारता में सामण क स्थान पर रेती गगाने का प्रयत्न करता है। इजीनियर रिखत नकर उसे पास कर देता है माय क विधाता जजा और मजिस्ट्रेटा की नाक क नीच पेगार अनलम नाजिर और चपरामी तक रिखत नेत रहत ह। और कानून की पहरेदार पुनिस भ्रष्टाचार को दूर करने के प्रयत्न में स्वय भ्रष्टाचारी बन गई है। जुआ सट्टा दडा सबकी नाल बधी हुई है। भाग गाजा अफाम चरम गराव काकीन सभी नियम विरुद्ध पनाय धडल्ले स विक रह ह। और पुनिस के जानते बूमत विक रहे ह क्योंकि हर चीकी का मासिक बधा हुआ रहता है। भारतीय समाज में अनतिकता में नग्न मृय को दखकर बडा दुख हाता है। क्या यही है राम-कृष्ण महावार और बुद्ध की धम भूमि जहाँ धम की मन्त्राविनी हिनारें लना थी जहाँ समाज में अनतिक काम अपवान स्वल्प होते थ। किन्तु आज जावन के हर क्षेत्र में मायाचारा का बोलवाला है। साहूकार भी मायाचार में फना है और भिगारी भी उससे मुक्त नहा है। सुना है भीख मागना भी एक धधा हा गया है। अब भीख मागना मजबूरी नहीं है बल्कि वह अय पंगे की तरह एक स्वतंत्र और कमाऊ पंगे बन गया है। उमक लिए लाग काढ़ी बनत है अये और गू ग बनत हैं। पुरुष ही नहीं स्त्रियाँ भी इस पंगे में सुलकर भाग स रही है। कुछ सूखे और दुष्काल का बहाना बना कर घर घर मागना

फिरती ह। इमने मह भा गुना है कि भिन्नारिया क भी टैन्डार ह ने है। वे कुछ भिन्नारिया को गीकर रगत ह। कुछ बातका घोर मानिवासा को उठा कर उनका हाथ पर ताड देत है घोर उमसे भीम मागो का पेना कराते ह। बालक अपना दयनीय दगा स दूमरे के मन में करग्या उपजाकर बापी कसाई करत ह। टैन्डार काम को धर्मात्मि भिन्नारिया को धपने घड़े पर से जाता है घोर बला मयम पैत डबडूा कर सता है। मायाचार क बान मे एक कथा भानी है—

एक दृढ धर्मात्मा विज्ञान था। मंगी करता था। बागी म एक ब्राह्मण प्राया। उमने दृढ की भोजनी देली ता वह वही गया घोर भोजन के लिए साधा मागन लगा। ब्राह्मण ने कहा—मै तुम्हें चिन्ती नेता हूँ। तुम पर खने जाओ घोर वही मेरी स्त्री म साधा स बना। प्रतीति ज्ञान के लिए उमने अपनी दगही भी उत दे नी। उमने बताया कि मेरी स्त्री बड़ी पतिव्रता है। वह बच्चों को भी स्तन पर हाथ नहीं लगाने देनी है। ब्राह्मण के मन मे उसकी स्त्री के प्रति बड़ा घादर का भाव हो गया। किन्तु दृढ के घर पर जा उसने दगा वह उसका बित्तुल निपरीत पाया। दृढ का मुवा पत्नी धपन गार के साथ रग रतिया कर रहा था। उमने दृढ को जाकर सब पटना कह गुनाई। दृढ को विश्वास नहीं हुआ। वह स्वय धाया घोर ब्राह्मण द्वारा बताई हुई बात को धाँवा से दखकर उस बराग्य हा गया। वह वहाँ स बन दिया। माग-अभय के लिए उसने कुछ मान की मुहरें एक बास की पानी साठी मे रख ली। वह ब्राह्मण भी साथ म बन गया। माग म ब्राह्मण को उस साठी का रहस्य पता चल गया घोर मौका पाकर वह उस साठी का उठाकर रफू चक्कर हा गया। दृढ धाने गया। उमने दगा एक तालाब मे एक बगुना एक पर पर बड़ी दर से लडा है। उस बड़ी श्रद्धा हुई उस बगुन पर। किन्तु थोड़ी देर बाद बगुना न मछली पर ऋषट्टा मारा घोर सा गया। दृढ का बड़ी रनाति हुई। वह धाग बड़ा

बड़ा जगल में कुछ गाधुबपी डाकू रहते थे। वह घाया बन गया और उस डाकूघाँने ठगने को जगल दे दा। वह उसी हृदयमें चुनपाप दलता रहा। उसने स्या—डाकू रात में चुनपाप उठे और रात्रमहल में चारी करव बहुत सामान में घाय। वह दलता रहा मर। घाही पर बाँ पुनिग घाई और उस पर मन्हेठ करव उग पकड़ म गर्। जब पुनिग उस बाजार में हाकर में जा रही था वह हल रहा था निया का मायाचारी पर। एक बस्या ने उस स्या और उसम ल्यात में हंसन का बागल पूछा। उसने चारा क बार में मर बाल बनायी। चार पकड़े म और मारा मान बरामल हा गया।

यह कुत्सिता और मायाचार निजल बग ? मान का मुठ करना है ता उस पीगना पड़ेगा मर उसम बामलता घायगा। कपड़े का साक करने क निग पीटना पड़ता है। इमी प्रहार धारमा का कुत्सिता दूर करने क लिए जब तक तप का चार नहीं मारेंगे तब तक धारमा नरम नहीं हा सकती। दलमभग घम धारमा की कुत्सिता निजामकर उस च्दु बनाने क लिए घाता है। घर में माना पका दूषा है। उसका उपयोग नहीं हाता ता उसकी कोई बीमल नहीं है। धारमा का जान लिया-जान निया इनना करने मात्र स काम नहीं चलता जब तक धारमा का कामल बनाने का पुण्याय नहीं किया जायगा।

हमन महान बनाया। दीवारें लड़ी करनी। उह मूढ रग रागल करव मत्राय भा। बिन्दु यनि दावान पर छत नहीं मो बरसान में बचाव नहीं हो सकता। दलमभग घम का यहा इष्टि है कि धारमा निराश्रय है। वह अपने धारम स्वरूप के धाध्य में ठहर जाय और इसक लिए धाजव घम सर्वाधिक उपयोगी है।

हम भगवान की पूजा करते हैं। हमारी इष्टि समय पर रहती है—दुकान का टाइम हो गया। इष्टि पूजा पर नहीं समय पर है। हमारा लक्ष्य है दुकान भगवान् नहीं। और हम भगवान् की पूजा का धायोजन

करके भगवान् स भी मायाचारा करते ह । हम भगवान् क पाम जात है । वहाँ जाकर बहुत कुछ कहते ह किन्तु उम मानत नहीं हैं । बार बार यणी हाता है तब भगवान् भा कहता है—तून मुक छाड निया जा म भी तुमे छोडता हूँ ।

हम अद्रिय विषया क वसीभूत हाकर इपर उपर भन्त रह हैं । कुत्सिता क कारण जिनवाणी का बात का नहीं सुनत हैं । इस मन की बुद्धिना क कारण हा हम सिडालय नहीं जा पा रह । अत मन का धम की लूटी मे बाधो तभी तुम्हारा कुटिलता निकल सकगी ।

लाग हमार व्यवहार का आकत हैं । हमारी बान्चाल का परगते है । यदि हमारे व्यवहार म मायाचार की डू आती है ता लाग हमारे साथ व्यवहार करना भी बन्त कर दत ह । कई लिरा पडा नहीं केवन विश्वास है जिसक ऊपर व्यापार हाता है लाग का व्यवहार हाता है । यदि बाजार मे किसा व्यापारी का मायाचार प्रगट हा जाता है तो लाग उस पर विश्वास नहीं करत व्यवहार नहीं करते । सोना बन्त हा जाता है ।

एक कौआ मार की पल लगाकर मारा क बाब छा गया । किन्तु जब मोर बाब तो कौए स नहीं रहा गया । वह भी बाबा । उसकी मायाचारा का भण्डा फूट गया आर मारा न बाब मार मार कर उस भगा निया । तब वह कौआ म पहुचा और वहाँ भी उसकी यहा दगा हुई । वास्तव मे मायावी पर कोई विश्वास नहीं करता । अत हम अपना व्यवहार अत्यन्त सरल बनाना चाहिये ।

मनस्येक वचस्येक वपुष्येक महात्मनाम् ।

मनस्ययत वचस्ययत वपुष्यन्यत् दुरात्मनाम् ॥

अर्थात् मन वचन और काय तीना म एकरूपता महात्माआ का लक्षण है और मन मे कुछ और वचन मे कुछ और काय मे कुछ और यह दुरात्मा व्यक्तिया का काम है ।

नाह ध्याए मे पारन किया जाता है। इमनिण निरभिमानना में ही धम है।

दुनिया बाहरा धमत्य रूप का ही मत्य मानकर मुग्ध हो रही है। जिनने ० मुग्ध प्राप्त जा रह है उनन ० य धात्मा दुनी होनी जा रहा है क्याकि जो वस्तु धमत्य होती है उसको ग्रहण करने मे हमारा उसका पारा दुष् ही उठाना पटना है। विचार करके ज्ञा जाय ता धमती मत्यता धरन धमर ही है। परन्तु जब तक मत्य तथा धमत्य का निगम नहीं जाना है तब तक इम बार का मत्य का प्रतीति नहीं हती है किने ने ज्ञा भी है कि—

फस्तूरो फुण्डल बसे, मृग दूटे बन माहि।
ऐसे घट में पीध है, दुनिया जाने नाहि

हे ममारी प्राणिया ! मारा यह जावन धात्मा व कान पर किया हुआ है। धर धात्मा है ता जावन है और यानि धात्मा नहीं है ता जावन भी नहीं है। इमका छार यह हुआ कि धरीर जिन नहीं रहता धामा जिन रहती है। हृद्य जीवित नहीं रहता पर धात्मा जीवित रहती है। इस हृष्टिपण म यदि इम मही रूप म विचार करे ता जात हागा कि यह धात्मा प्रकाशवान मृग व ममान है। और इमो का प्रकाश इम धरीर और इन्धिया तथा मन म पड रहा है। और जो पर पनाय है उन पर भी पड रहा है। ता इमे यह ठाक मीर पर विचार कर जना चाहिए कि वह धामा अपनी गृद्ध स्थिति मे भी है या नहीं? जब धात्मा धरन प्रकाश मे रहता है और गृद्ध स्थिति मे रहती है उन समय धामा म जान का ज्ञानि जतनी रहती है। जब मरुच गृद्ध स्वरूप धमर म जागत स्थिति मे रहती है उन समय धात्मा म जान की ज्ञानि जतनी रहती है। मचा गृद्ध स्वरूप

धन्दर से जागृत होता है। दया, धर्मा या करुणा का प्रकाश उमड़े में फूटता है। और मारा जीवन जगमग जगमग करने लगता है। जब यह जीवन जगमगाहट करता है तो ऐसी आत्मा जिस परिवार में रहती है वह परिवार भी जगमगा उठता है। उसका आसपास का समाज भी जगमगाते हैं। उसके चारों ओर का वातावरण एक प्रकार के अलौकिक प्रकाश में खमकने लगता है।

लेकिन जब आत्मा अपने गुण स्वरूप में नहीं रहती है और आवरण से घिर जाती है तब वह आवरण चाहे मिथ्यात्व का हो या चाहे अविरल का हो अथवा अमयम का हो चाहे प्रमाण का हो चाहे कथाय का हो चाहे योग का हो। यानि किसी भी भाव का हो। जन गान्धारी की परिभाषा में इन सभी गन्धर्वतिया का प्रयोग किया गया है। सक्षेप में यदि आप इसका समझ लें तो इसका अर्थ यह है कि जब तक सच्चा विश्वास नहीं होता है जब तक अज्ञान-मन्वी जीवन अज्ञानता होती तब तक मनुष्य मिथ्या विश्वास में फसा रहता है। और यह मिथ्या सम्बन्ध अपने जीवन के सम्बन्ध में भी होते हैं पारिवारिक प्रथाओं के सम्बन्ध में भी होते हैं समाज और राष्ट्र के सम्बन्ध में भी मिथ्या विश्वास होता है।

जब तक मिथ्या विश्वास रहता है तब तक चाहे साधु हो अथवा गृहस्थ हो वह सच्च सत्य का कल्पित नहीं प्राप्त कर सकता। आज बल मसार में अनक धर्म अनक सत है तथा अनेक शास्त्र हैं पर इन सभी धर्मों और भिन्न भिन्न गान्धियों में सना यही प्रश्न उठता है कि आत्मा क्या है इस सम्बन्ध में हजारों मिथ्या विश्वास हैं। परमात्मा और मानव क्या है इस त्रिपय में भी हजारों मिथ्या विश्वास हैं। इस प्रकार से जीवन जब मिथ्या विश्वासों में घिर जाता है तब अपने सही स्वरूप का ज्ञान पहचान पाता। अपने गुण स्वरूप का स्मरण नहीं कर पाता। तब यह जीव अनेक निन्द्य यानिया में चक्कर काटता रहता है और उसका जिनारा प्राप्त करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

व्यवहार में भा कहा है कि मरत्य ही जीवन की धाभा है। किसी क शरीर में भव धम बहुत सुन्दर हा परन्तु कवन नाक न हा तो क्या वह सुन्दरता पा सकेगा। जैम नाक क बिना शरीर धमुन्दर लगता है उसी प्रकार मरत्य के बिना धारमा निबल हा जाता है। एष बडा विगल मकान ओ साखा रुपय में बनाया हुआ हा परन्तु उसमें गउन बाया कोर् न हा तो वह उबाड मामूम हागा। इसा तरह हमारे जीवन में हया पमा धामि सब कुछ हो परन्तु मरत्य न हा तो हमारा यह जीवन उबाड धयवा घूय हागा। मुर् का चाटे जितना भी शू गार किया जाये उसमें कई लाभ नहीं हागा। इसी तरह मनुष्य में सय न हा तो धय सब गुण बंधार हा जाते हैं। मसार में प्राय दखा जाता है कि मनुष्य की इज्जन या गान कवल धमरत्य के कारण ही बिगड जी है। धात्र हमारे धम गान्त्रि में धनेकी उगाहरण भू पडे है। राजा कमु ने कवल बाह्यरु स्त्री का पक्ष ल धमरत्य की सत्य पामित किया था। फरत शीघ्र हा बडे हुए तरवार में उनका सिहासन नीधे घुम गया था। इतना ही नहीं उनका धपमान हुआ। धन्त में उनको धसत्य क निमित्त में नरक में जाना पडा। इसा तरह धौर भी धनेक कमाण मौजू ह। पुराहित सयधोध ने सत्य के रूप में धमरत्य का प्रधार किया था जब उनका धमरत्य प्रण हुआ तो उनको गाबर खाना पडा धन्त में बडे पहलवाना क द्वारा घूसों का मार को सहन करना पडा। उसी के दुख से नीच गति में जाना पडा। धाग उनको जम की यातना उटानी पडी। इसी तरह व्यवहार जगत में धसत्य बोलन वाल मनुष्य का कोई विग्वान नहीं करता है। धात्र दुनिया क व्यवहार में कवन धसत्य का सत्य का नाम दे करक हजारों लागा का ठगा जा रहा है। इमलिग प्रयक मानव का जनी तर हा सय व्यवहार करना चाहिये। धन्त में जब मनुष्य भव का छोड़कर य धारमा बना जाना है तब उसका उटा कर में जाने वाले भा य नी मुस में धानन

है कि अरहत नाम सत्य है हिन्दु है ता राम नाम सत्य तथा मुस्लिम भी अस्ताह का नाम सत्य के नाम से पुकारते हैं। प्रायः य भी देखा जाता है कि मनुष्य जन्म जब मिलता है तभी वह अपने साथ सत्य का बल लेकर आता है। बच्चा जब पैदा होता है तब अपना माता के साथ सहज ही सम्बन्ध हो जाता है उसी प्रकार सत्य का भी मनुष्य में स्वाभाविक सम्बन्ध है जो कि जन्म से ही होता है। प्रत्यक्ष में भी हम देखते हैं कि जब बच्चा छोटा होता है वह सत्य ही बोलता है; वह झूठ बोलना जानता ही नहीं है। लेकिन मनुष्य जब उसका सत्यता पर चार करते हैं तब वह बच्चा झूठ बोलना सीख जाता है। वह समझ जाता है कि मेरा सत्य बात पर यह लोग मेरा उपहास करते हैं। भना उपहास करना किसे अच्छा लगता है। तभी डर से वह झूठ बोलना सीख जाता है। इसमें आप यह भनी भाति समझ सकते हैं कि झूठ बोलना मानना पड़ता है। सत्य बोलना नहीं। यह किता से साक्षात् नहीं जाता। आजकल दुनिया में बहुत से हिन्दूजन सत्य नारायण को कथा कर आयोजन करते हैं परन्तु उसका अर्थ नहीं समझते हैं। जब तक सत्य का आचरण नहीं किया जायगा तब तक सत्यनारायण का प्रसन्न नहीं किया जा सकता। अहिंसा का विचार जब तक हम नहीं करेंगे तब तक सत्य की प्रतीति हमारे अन्दर नहीं उभर सकती है। परन्तु लोग यह कहते हैं कि असत्य के बिना जीवन नहीं चल सकता है। ऐसा कहना अतर्क्य है। अहिंसा में अपवाद हो सकता है पर सत्य में इसकी गुंजाइश नहीं होती। वह पूरा होता है। उस पूरा ही पालन करता पड़ता है। इसलिए अहिंसा का जहाँ भगवता बताया गया है वहाँ पर सत्य की भगवान माना गया है। कहा भी है कि -

सत्यमेव जयते नानृतम्

सत्य की ही जय होता है। बाह्य दृष्टि से भो ही असत्य का आगे सत्य प्राणी हारता है। अहिंसा परन्तु अन्त में नतीजा यह होता है

उत्तम सत्य धम

मत्स्यमव जयत (समाप्त में गंग की हा जय हाता है)

मत्स्य ही धात्मा का निज धम है । धात्मा का दाड करक जिनना भा पर वस्तु है सब धमत्य है । यह धात्मा धनाति वान म धमत्य वस्तु क समय म धमन मत्स्य का भूत कर धमत्य की प्रतीति कर रहा है । धात्र ममार म जा भा पर्नात्य सम्बन्धी मुख की सामक्षा हमार सामन गिवाई म रहा है यह भी मत्स्य की धाराधना म ही प्राप्त हाता है । धमत्य मे पटा श्वा य धात्मा धमत्य का धाराधना करने करते धमत्य रूप समाप्त में परिधमन कर रहा है । मत्स्य स्वल्प निजात्मा का जा स्वल्प है उम स्वल्प को धात्र तब उमक प्रतीति न । हुई है ।

धमर विचार करक दत्ता जाय ता धमनी धाति धमना हा स्वल्प है । वह स्वल्प तीन विभाग मे हमेगा मनन किया जाता है—मम्यकज्ञान मम्यकज्ञान तथा मम्यकचारित्र । य धमने स्वल्प म कमा धमन नहीं हाते हैं । परन्तु धात्र धमर विचार करक दत्ता जाय ता हमन भिन जा धमत्य वस्तु है वह वस्तु हमका मत्स्य रूप म प्रतीति हा गया है । नुनिया धात्रकत धमत्य वस्तु का रान तिन लीड धूप करक प्राप्त करना चाहता है और उमी म गान्ति प्राप्त करना चाहता है । किन्तु धात्र तब धमत्य वस्तु म किसी को गान्ति प्राप्त नहीं हुई है । दु ख म दु म प्राप्त हा रहा है मानव धात्री नुनिया को धमने वग मे करना चाहता है और वग म वगन के विना हजार्गे धमत्य घडयत्र की रचना रचना है परन्तु हमम निजमात्र भी मुख और गान्ति नहीं है और सत्य की प्रतीति नहीं है । मत्स्य धात्मा का धम है । जब मत्स्य को धमत्य माना जाता है तब मानव हमगा नु ख पाता है ।

संगार मे प्राय देना जाता है कि स्त्रा धमने पति का हमगा म्मरुष करती रहती है उमे धमनी मत्रर क सामने दगनी रहती है

भा उसका आराधना करना है। यात्र में विधवा हान पर भी यात्र करती है। परन्तु पर पुरुष का यात्र नहीं करती है। उसका कितना भी दुःख क्या न हो उस दुःख को शान्तिपूर्वक सहन करके अपने पति का स्मरण करके अपने जीवन को बीताती है इसी तरह न भ्राज ससार में सत्य जा है वह आत्मा का धर्म है और जो सत्य है वही जैन धर्म है—परम अहिंसा धर्म। वही आत्मा का सच्चा स्वरूप है रोप सब असत्य है। असत्य को सत्य समझ कर हजारों भूठ बाले जाते हैं। इस मानव को इसी असत्य से तकलीफ उठाना पड़ती है। वही भा है कि—

सत्य की भाषा में क्या हुआ विवेकी पुरुष अत्यु को भी जीत सता है। हमारे प्रायः शास्त्रों में भी कहा है कि सत्यं गिव सुन्दरम्। यह ग्रीस की सभ्यता से हमारे यहाँ प्राया हुआ एक सूत्र है और उस सूत्र को हिन्दुस्तान की सभ्यता में भी ज्यादातर माना जाता है। The truth the good the beautiful

ये ही वाक्य सूत्र हमने सत्यं गिव सुन्दरम् के रूप में अपना लिया है। सत्य सुन्दर है और कल्याणकारी है। लेकिन बहुत से लोग सुन्दरता में ही सुख मान लेते हैं। एक तत्ववेत्ता के पास एक गैमा ही व्यक्ति प्राया जो सुन्दरता में ही सुख मानता था। उसने कहा कि जब सुन्दरता में सुख रहता है तो सत्य और गिव का मानने की आवश्यकता क्या है। जो जितना अधिक तत्ववेत्ता होता है वह उतना ही गहरा होता है। मकान जितना भी ऊँचा होता है उतना ही गहरा होता है। तत्ववेत्ता ने उससे पूछा कि क्या तुम्हें सुन्दरता ही प्रिय है? उस व्यक्ति ने कहा कि हाँ। तब तत्ववेत्ता ने कहा—अगर आपका कोई सुन्दर सुन्दर गानिया दे सता क्या आपका अच्छी तगगी। व्यक्ति ने कहा—नहीं। तत्ववेत्ता ने दूसरी तरह से समझाकर कहा—अगर तुम्हें कोई पूतों के देजाय किसी नन्दे बच्च के हाथ काट कर देता तुम्हें प्रिय होगा। तब उसने समझा कि वारी सुन्दरता ही काम की नहीं है। एक स्त्री बड़ी रूपवती है, गौरवण की

हा मुन्दर घोर अर्ध बस्त्र धाभूषण वाता हा परन्तु वह लड़ने वाली है
 ना क्या सबका प्रिय लगती अथवा किमा का न लगती ; अपने से मुन्दर
 हा वह हम नंगा चाहिए स्वयं सत्य एवं शिव मुक्त जाना चाहिए ।
 बाई स्त्री कुण्ड क्यों न हो परन्तु अपने पति का अपने प्राण से अर्ध
 वाता है। घोर दूमरी स्त्री अपने पति से नफरत करती है उन जाना
 से मुन्दर की हागा ? मय घोर शिव के अभाव में मुन्दरता का मूल्य
 कुछ नहीं जाना । वह अभागिनी है जाना है । एक समय की बात
 है कि—

राजा भाऊ अपने पण्डितों का मण्डल से बैठे थे । उस समय एक
 पण्डित अस्मित नग से नग से पुर हाकर बहने लगा—महाराज ! एक
 दाहा बड़ा बढ़िया है घोर अर्ध भाव भी बहुत अर्ध है । वह वाता
 यह है—

मद तो है मूछ बाका, नन बाकी गोरिया ।

गाय तो है सींग बाकी, रग बाकी घोरिया ॥

अर्थात् मूछ बाकी है जिसका मूछ बाकी हो घोर गोरिया बड़ा है
 जिसका नन बाकी है गाय बड़ी है जिसकी सींगें बाकी हैं घोर घांटा
 बड़ा है जिसका रग मनाहर है ।

पण्डित महाराज घोर महाराज भाऊ से बात यह सब बातें रहीं थी
 कि उनी समय भड कराने वाला एक गडरिया भेद लिए वहाँ से गुजरा ।
 उस भी उल्लिखित दाहा मुना था । वह मामूली पदा लिखा था । यह
 दाहा उसे बहुत अर्धरा । अतः यह कहता हुआ प्राण बड़ा—

चल म्हारी टूटी, ये चारो बातें झूठी ।

राजा भाऊ ने यह वाक्य सुना ना गडरिया का कुमा लाने की
 आज्ञा दी । वह गडरिया मभा से लाया गया । राजा भाऊ ने कहा कि

तुम इन चारों बातों को भूठा कम रहने हो ? गहरिय न कहव कर
कहा—

यह पंडित है बडा अनाडी,
इसके मारु खींच कृल्हाडी ।
इसने सारी सभा बिगाडी,
मुख से झुठी बातें काढी ॥

महाराज ! किसी मद की भूछे हैं तो बाकी पर यदि वह पगु
स भी गया बीता है तो उसकी भूछे किस काम की ? किसी स्त्री का
भ्रांखें तिरछी हैं और वह कुलटा है तो उसकी भ्रांखें किस मतलब की ?
गाय की सींग बांकी हैं पर यदि वह दूध नहीं दती तो किस काम की ?
इसी तरह घोडो का रग अच्छा है पर उसनी खाल गधी सरीखी है
तो वह निक्कमी ही है । भव प्राप स्वयं विचार कर सकते हैं 'ब' इन
चारों बातों में कहा तक सत्य है । पूर्वीनाथ ! ये चार बातें सत्य है —

मद तो रण शूर बाका, शील वाकी गोरिया ।

गाय तो है दूध बाकी चाल बाकी घोरिया ॥

मद वही है जो युद्ध के समय अपनी शूरवीरता से शत्रुघात कर छक्क
झुड़ा जाता हो । स्त्री वही है जो पालवती हा । गाय वही है जो दूध
दती हा घोडो वही अच्छी है जिसकी खाल अच्छी हा । गहरिया का
यह व्याख्यान सुनकर महाराज भाज बहुत प्रसन्न हुए । यह तो एक
उत्पादक है । तात्पर्य यह है कि उस पंडित ने अभिमान किया था । धन
उम अभिमान सहन करना पडा । इस प्रकार अभिमान में अधम और
निरभिमानता में धम है । जो अभिमान त्याग कर जितना नम्र बनता
चला जाता है वह उतना ही उच्च पद प्राप्त करता है । मैं-मैं धरन
वाल बकरे का गला काटा जाता है मैंना कहने से मना का वाद और

भरना हा पगल है। तम अगल 'यद्' खना बाडा ता बन इसक पाछे जगल में जाना और बही पर दमना। दूमरे गिन राका और बाका लकड़ी पाउन के लिए जगल में निकल। नामख पदल म हा जगल में जाकर एक पेठ क पाछे छिप गया। राका और बाका धा रह थ। धवानट माग में एक खेरी पर राका का पैर लग गया और उममें ग मन खन को धावाज हुई। व उम माग या बाग की घना ममभ कर धम म खने लगा ताकि उमका गनी की नजर उम पर न पड। जब वह उम पर मिट्टी डालन लगा ता उमही पन्ना ने कहा कि यह क्या कर रहे है। राका ने कना-यह मान की माहुरा का घनी मामूम हाता है उम पर अगल धूल न डालू ता उसका खबर तरा मन दुखित शया। धन में उम धूल म डक रहा ह। बाका म कहा-य ता धूल हा है। धूल पर धूल डालने म क्या नाभ।

इमनिष वधुधा ' माना और हारा धूल हा ना है। धाप इम मन ही माना या हीरा कह बमन वह धूल हा है। परनु धात्र की सुनिया में प्रवेश प्राणी समवनी हुई धूल के पात्र अपना धमूय जीवन बनार कर रहे। कितना धजान है य मनुष्य की जखरत के लिए ही मग्रह करना धानि पर उमक पात्र धमूय जीवन गवा पना कही की बुद्धिमानी है। उन मनुष्य का धमना मख और गानि प्राप्त करना है ता उनका म धूल का मन त्याग करन की धाव्यकता है। जब तक लाग कथाय रूपी धूल को भीतर स नहा लाहेंगे तब तक हमारा धागमा की दुर्दि नही हो सकता है। मानक माना चांग रूपी धूल का मग्रह करन भी क्या य विचार करना है कि मैं यद् मव मग्रह क्या कर रहा हूँ। इसका अगल धाप विचार करगे ता धापरा सग्रह बिन्कुन निरपन प्रतीन शणी मनुष्य जिताका मग्रह करता है वना धन कभी कभी उमकी सृसु का कारण बन जाता है। मनुष्य को यद् मारी पृथ्या द दा जाये तो भा उमका धात्मा मूल नही हा सकती। उसकी धात्मा

ता निर्लोभ दक्षिण स हा घान्त हो सकता है । य हा माध माय को प्राप्ति की दूसरी सीढ़ी है ।

लोभ से हानि

किसी एक नगर मे एक लामो साहूवार रहता था । उसका यही शौक था कि साने की प्रत्येक वस्तु का सा का जाडा अपने पाम रखना था । उसने अत्यन्त लोभ से पसा कमा कर सोने क दो घाडे बन की जोडी तथा शायी आदि सब बनवा कर सहज्यान मे रख लिये और वहाँ एक भाराम कुर्सी पर बठ करके हमेशा मन मे सन्तोष मानता था यह बात देव को मानूम हुई देव इसके लोभ की परीक्षा करन क निरा उमक घर पर पहुँचा और साहूवार को तुरन्त ही आवाज द करके बाहर बुलवाया । सठ ने तुरन्त उठ कर किवाड खाना दखता है कि एक देव बाहर खडा है । सठ ने ध्यान का कारण पूछा तो देव ने कहा कि मे आपका आगा की नृप्ति करन आया हूँ । तुम्हारा जा अच्छा हा सा करो सठ मन मे विचार करन लगा ख तो जा चाहा सभा द सकतर है । अब उसमे क्या मागना चाहिए । कोई जमीन मागू तो भा मेरी आगा पूरी नही हागी या कोई राज्य मागू तो इससे भी मेरी आगा पूरी नही हागी या किसी एक गाय या बल क लिए साना मागू तो इससे भी नृप्ति नही हा सकती है । इसलिए मुझे ऐसा धर्यान मागना चाहिए कि जिस जिस वस्तु का मे स्पर्श करू वही सभी साना बन जाय । तब देव ने तथास्तु कहा और वहाँ से चला गया । तत्पश्चात् सठ ने अपनी कुर्सी को हाथ लगाया तो वह कुर्सी माने की बन गई । कपड को हाथ लगाया वह सब साना बन गया । घर की दीवार का हाथ लगाया ह वह दीवार भी साने की बन जाती है । इस तरह स वह धान्त मे मग्न हो कर प्रत्येक वस्तु को स्पर्श करता है । वह सभी साना बन जाता है । उस समय १२ बज का समय था । घर वाली ने साचा कि सठ जी अभी तक साना खाने नही आया । क्या कारण है । उसने बाहर आवर दखा

कि सब माना बना हुआ है। वह मठ से मान के लिए जाता है। तब वह पानी के मांटे के हाथ लगता है तो वह भी माने का हो जाता है। जब घाटा को स्पष्ट करना है वह भी मान का बन जाता है। जब गंगा घाट का स्पष्ट करना है वह भी माना बन जाता है। धन्य में धरती परवाही में कहता है कि तुम धरती हाथा से मर मुह में माना छान ता। वह भी कष्ट में जाकर मान का बन जाता है। हम उसका बर्तन बेचना जाने लगता है धन्य में मन में विचार करता है कि यह माना मुझे सुगन्धी हा गया। फिर मन में विचार करने लग कि यह मभा बुरी मान बनाय का परिणाम है। वह सुगन्धी हा लाभ बनाय का त्याग करता है और उमी दब का घाटाघना करता है। वह दब माना है और मर के बड़े धनुमार उसका दुख दूर कर देता है। कहन का मातृदय यह है कि सानी मनुष्य कभा भा मुझ छोड़ गान्ति महा पा सकता है।

बाह्य सम्पत्ति हमारा धार्मिक है और उमक द्वारा होन वान पञ्चदश विषय भी घाटा का धनक प्रकार के दुख देने वान हैं। इसा लिए बड़े बड़े पुण्यपाता लागाने धार्मिक पञ्चदश सम्बन्धा विषय सुख का इस तरह में माना है—

याताभ्रविभ्रममिद वसुधाधिपत्यम्,
 आपातमाश्रमधुरो विषयोपभोग ।
 प्राणास्तूणाप्रजलविदुसमा नराणां,
 धम सखा परमहो परलोकयाने ॥

हम समय पृथवा तब का अधिपत्य वायु के वग से तितर बितर हुए मय के समान धरियर है तथा मानव सम्बन्धी सम्पूर्ण विषयाय भाग आपात मधुर हैं अथवा उपभाग जान से ही ये विषयापभोग मधुर हात हैं, परिणाम से नहीं। तथा मनुष्यों के प्राण तृण के अग्रभाग पर

रह हुए जन बिन्दु के समान चंचल हैं अथानु न जान य प्राण पम्ब
 कब इस मन का छोड़कर उड़ जायेंगे । अर्थात् यह बितन आश्चर्य का
 बात है, कि इन नन्वर वस्तुओं के लिए मनुष्य धार प्रयत्न करता रहता
 है तो भी ये सभी वस्तुएँ मनुष्य के सबदा सहचर नही होती । सबदा
 सहचर है तो एक मात्र धर्म ही है जो परलोक प्रायण काल में भी
 साथ नहीं छोड़ता अर्थात् परलोक जान के समय मनुष्य का एक मात्र
 सखा धर्म ही हाता है ।

यह शरीर अत्यन्त अगुड है । इस शरीर में कोई भी वस्तु ग्रहण
 करने योग्य नहीं है । यह शरीर सप्त धातु से युक्त है । इसमें कोई भी
 गार वस्तु छूने भी नहीं मिलती । परन्तु मूल प्राणी अनादि काल से
 महापुरुष शरीर के ऊपर मोहित हो कर अनन्त निच पर्याया में जन्म
 लेकर अनादि काल से दुःख उठा रहा है । इस शरीर के मोह में जाव
 चीगसा योनियों में भ्रमण करता आ रहा है । मानव शरीर के रूप पर
 मोहित होकर उसकी प्राप्ति के लिए अनेक प्रयत्न करता है । वह बाहर
 की सफाई की तरफ ज्यादा ध्यान रखता है परन्तु भीतर की सफाई का
 कोई ख्याल नहीं रखता । आजकल दुनिया में मनुष्य के भीतर की
 भावना अतनी गन्नी जाती जा रहा है कि जो उसके पास सड़ा हाता
 है उसका भी गन्दा बना देता है । आजकल हम बाहरी सफाई के विषय
 में बड़ा भ्रम फला हुआ है । अधिकांश लोग बाहरी ही सफाई करते हैं ।
 बाहर के कपड़े शरीर की सफाई के लिए साबुन से काम लत है परन्तु
 साबुन से केवल बाहरी सफाई होती है भीतरी तम कषाय की सफाई
 नहीं हो सकती । शरीर की जितनी जितनी सफाई करना जाय उतनी
 उतनी उसकी गन्गी निकली रहती है । जस कचरे थड़े में पानी भर
 कर रख लिया जाय तो धीरे धीरे मिट्टी घुलने लगती है उसी प्रकार
 अगर इस शरीर को साबुन लगाकर रात दिन सफाई की जाय तो भी
 हमकी सफाई नहीं होगा । हमारा शरीर अन्दर से शुद्ध निकलती रहता

वि मत्य की विजय जाना है और वह भ्रम य दाम बन बन रहता है ।
 "मनिए महान ताथझूरा न मय घोर असत्य का विचार करके
 भ्रमत्य रूप धात्मा के साथ हमेंगा रहकर दुख देने वाली बाह्य सम्पत्ति
 प्रादि का छोड़कर मत्य की खोज की तब वह भय भनादि काल से असत्य
 के अन्तर छिपा अघा पात हुआ । तत्पश्चात् उसका दूर करने के लिए
 धार जगता पवन के चोटी पर जा करके असत्य का पूगलता मन
 वचन काय म विनाग किया । घोर सम्यक्ज्ञान के साथ साथ उसकी
 प्राप्ति के लिए पुन्याथ के साथ आचरण किया । इसलिये आज भी
 लोग उन्नी भगवान का साथ कहते हैं शिव रूप कहते हैं घोर व ही
 दुनिया म मुन्दर कहाते हैं । एसा सुन्दर वस्तु अपन पास ही है परन्तु
 आज हमको दिखाई न देने स असत्य की धार जा रह है । मनुष्य का
 हमेंगा मत्य बोलना चाहिए । ममार म व्यवहार भी मत्य से ही चलता
 है । असत्य के प्रवृत्त होने से लोक निन्दा होती है अज्जन विगड जाती
 है तथा लोक व्यवहार घाति करना बन्द कर देते है ।

राज व्यवहार भी तभी चलना है जब सत्यता का टपते हैं । बडे २
 लोग लाठी रुपय का बठ २ व्यवहार करते है वह मभी सत्य का
 ही प्रभाव है । सत्यवाणी लाग ससार मे घोखा नहां खात है । सभी जगह
 सम्मानित हाते हैं । इसलिये सत्य पुरय का सज्जन पुरुष के नाम म भी
 पुकारा जाता है । उदाहरणाय व्यवहार मे भा असा जाता है—उचल
 धाणी मे एक बार पन्ने म आया था कि अमरिका के एक प्रसिद्ध
 इतिहासकार विलियम गोपिया ने एक दिन किसी लडकी को सडकपर
 रोते हुए देखकर रोने का कारण पूछा । लडकी ने कहा—मरा पडा फूट
 गया है । अगर मैं अब यू ही घर जाऊं ता मरी मा मुझे मारेगी । यदि
 आपको पूरा घडा जोडना हा ता जाड दीजियेगा । इतिहासकार ने
 कहा कि पडा जोडना ता नहीं आता परन्तु मैं तुम्ह पने दूंगा ।
 तम दूसरा पडा मरीन्दर से आओ तो तुम्हारी मा बुध नहीं बहेगी । यह

वहकर उसका धपन बहुत मे हाथ डाला ता बहुत मारना मिला । उमन
 लडकी म कहा— धभी मरे पास पैत नहीं हैं अगर कल मुम यही इया समय
 मिरो ता म मुम्ह जरूर पम न दूगा । आज धपनी माला जो म कह
 ना कि पहा कन लाऊंगी । लडकी ने विस्वाम किया और धपने धर
 धली गई । इतिहासकार भी जब धपने धर धामा तो उस धपने मित्र
 का एक तार मिला जिसम लिखा था कि कल स्टेशन पर मुम मुभम जरूर
 मिलना । स्टेशन पर जान का समय वही था जो उमने उस लडकी का दिया
 था । धन अब वह कुछ दुविधा मे पड गया । उतन साधा—मित्र या धम ?
 मित्र तो इग दुनिया का ही है । परन्तु धम ना परनाक का भा है इन
 लिए उसने धम का माथ तेना ही रवीगार किया । और स्टेशन पर
 धपने नौकर का भेजा और एक चिट्ठी धपने नौकर का दी कि मुमे
 एक आवश्यक काय है म नहीं धा सवा इनके लिए धामा मागी । वह
 चाहता तो नौकर का पैस नकर लडकी क पाम भज सकता था लेकिन
 उसने धपने वचन का पालन करने के लिए ही ऐसा किया । ता इनका
 साराग यह है कि प्रत्येक मानव प्राणी की वाणी मे पैसा ही इडता हाना
 चाहिए । सत्य का पालन करन के लिए ऐसी इडता का सेवा करना
 परम धामधक है । पस की हानि उठा ले पर सत्य की हानि नहीं उटानी
 चाहिए । धन वचन की इडता धवदय हानी चाहिए ।
 इसलिए ससार मे प्रत्येक मानव को अगर मानव जम की सफलता
 करके सत्य की खोज करना है ना व्यवहार म भी हमको सत्यता का
 व्यवहार करना चाहिए । आज दुनिया मे देला जाता है कि व्यापारी
 लोग किस तरह धसत्य का व्यवहार करके दुनिया को धधेर मे
 पडुधान की चेष्टा कर रहे है । आज कल बाजार की मिगई म तेन
 मे धाटे म धा में मसाधों मे और भी जिननी धीज है उनके धन्दर
 मित्रावत क धतिरित्त कोई धीज गुड धामिस दुवाना मे नहीं मिल
 सक्ती है क्योंकि हमार पाध धसत्य का व्यवहार सवार हा रहा है ।
 इसलिए मूल धीर धानि हम मानव क धन्दर मे दूर भागनी जा रही

अनक बार हुवान पर भी बडवाहन नही जानी है । अन्तर मे जैसा का तैसा ही रहता है । नमी प्रवाह मनुष्य के भीतर का जब तक लाभ कपाय निकल नहीं जाती है तब तक बाह्य गुडि का कोई भी लाभ नहीं हो सकता है । आजकल लोग ज्यादा बाह्य गुडि को तरफ ध्यान देते हैं परन्तु जब तक भीतर लाभकपाय साफ नहीं होता है तब तक उनका मन नियम नल प्राप्ति सभी क्रिया व्यर्थ कहलानी है । वहा भा है कि—

आत्मा नदी सयमपुण्यतीर्था,
सत्योदका शीलतटा दयोर्मि ।
तत्राभिषेक कुरु पाण्डुपुत्र,
न चारिणा शुद्धयति चान्तरात्मा ॥

अर्थात् हे पाण्डुपुत्र ! आत्माकयी नदी सयम रूप पवित्र तीर्थ वाला है उमम सत्य रूप जल भरा हुआ है उमका शील तटा है और न्या मरगें हैं । तुम उमी मे स्नान करा । जल के द्वारा अत करण की गुडि गहा हो सकती ।

अन धमनिष्ठा की प्राप्ति के लिए सारर की बाह्य और आन्तरिक गुडि के साथ निरन्तर धारमनिरीभण और मदिचार की बहुत बडा आवश्यकता है ।

निलोभता ही मनुष्य की हमरा सुत और गान्ति देने वाली है । कण्डपुर मे एक बहुत गरीब आत्मी रहता था । वह बडा निलोभी था । उस मभा लाग राका वह कर पुकारते थे । उसकी पत्नी का नाम था वाका । एक दिन मामदेव भक्त ने भगवान से कहा भगवान ! राका और वाका आपक बहुत भक्त हैं । वकारे रोज रोज मजूरी करके अपना पेट पालत है उनका क्या नहीं आप कुछ दते ह । भगवान ने कहा-नामदेव ! व कुछ सना नहीं चाने ह । उह ता मजूरी करके वे

इतनी रात गय किसा को कस जगावें । ता स्था म भट कम हा । ऊपर की धार दया ता एक रस्सी सटवती श्रीमी । उम पकटा धीर चढ़ गय । म्ना ने म्ना ता विगिमत रह गई । बाबा—इतना रात का ? नविन ऊपर धाय कम । तुलसीदास मुक्कुरावर बाब—मुभस क्या बनता है । तूने ही तो मर किय रस्सी सटका रगा है । म्ना का बडा धाचय हुआ—मने ता रस्सी नहीं लटवाई । वह उठा धीर दीपक के प्रकाश मे टगा—क्या रस्सी ना नहीं अबस्ता एक भयानक साँप जरुर सटका हुआ है । स्त्री को समभते देर नहीं लगी । वह तान भर लहजे मे बोली—

जितना प्रेम हराम से उतना हरि से होय ।

चला जाय वैकुण्ठ में पला न पकड़े कोय ॥

बात क्या थी तीर था जो तुलसीदास के हृदय मे विघ गया—यह सब कहती है । मैं जितना प्रेम भगुधि का मान हूग स्था म करता हू, यदि मन उतना प्रेम भगवान् से किया जाता तो भरा उदार हा जाता । व जैसे धाय कम हा उल्ट परा वापस चल गय—पर नहा बन का धीर उठाने भगवान का भक्ति म अपना आपका समर्पित कर दिया धीर एक दिन व महात्मा बन गये ।

हम शरार के ब्यामाह म फस कर उस शुद्ध करने भा निरन्तर प्रयत्न करते है किन्तु वह पवित्र नहीं हाता । उसके धाने पाछे पर भी आत्मा फिर भी पवित्र नहा हा पाता । आत्मा का शुद्धि शरार भी शुद्धि से नहीं होगी वह होगी अंतरंग और बहिरंग समय धारण करने स । वह होगी सोम कथाय छोडने म ।

एक व्यक्ति ने सोचा—कायला काला है । उससे मर हाथ भा काल हा जाते है । चलो साबुन से धाकर इसे सफेद कर दूँ । उसने मना साबुन लगाया महीना परिश्रम किया किन्तु कायला सफेद नहीं हुआ । वह बडा परेगान हो गया—क्या उपाय करू कि यह सफेद हो जाय ।

एक विद्वान्नी पुत्राय न दत्तं त्रिया । वान—अथा । कायन वा मानुन ग
रुत इतर सपे नही विद्या जाता । तन्त्र अगत्र मपत्र करना है कायन
की नो एक काम करा । अम जना वा । अयन आप मपद नो जायगा ।
उम अर्थि न अम न विद्या और उम आनय न्ना यन दत्तकर वि जन
कर कायना मपे नो गया है ।

मव वाह्य गुणि पर जार भेन हैं । अत गुडि पर त्रोर मत्र मव यत्र
काग्य है वि कार् कन्ने ह जन म स्नान करन म गुडि हा जाता है ।
कार् मया जमुता मानवरा म और कार् धमुत ताताव या कुड म
नशन म गुडि मानत है । विल जत्र म अगत्र का वाह्य गुडि हा
जायगा उमकी अत गुडि जत्र म कम हागी । फिर अमने ने अत म
अत्र आत्मा जन म कम गुत्र हागी । अम पाप म पाप का धाना चाहत
हैं । भाई ! पाप ता धुनगा पुण्य म और फिर तप का अर्थि मे उम
जनाता अयेगा । तब अत्र आत्मा शुद्ध हा पायगा ।

गहर मे चारा धार अर्थाथ फलना है । घर म भी बन्धु अना है ।
यत्र अर्थाथ अत्र म नही अर्था तम्हारे गरीर म हा यह अर्थाथ निकना
है । तम दूष या मवा लाकर अर्थाथ ही निजावन हा ।

एक भक्त साधु क पास पहुँचा । बोना—मुझे बराग्य हा गया है
मुझे भी साधु बना ना । साधु बोना—उगाय कय ही गया तम्हे । क्या
औरत म भगडा हा गया है या स्वाना नहा भिनना है ? तुम्ह बराग्य है
ता अगार म सबसे दुरी वस्तु क्या है तुम दूढ कर ताया । बहु गया ।
उमन सब जगह न्ना । उम ट्टी स अधिक् गनी वस्तु कोड नहीं
निष्वा नी । उम पर मविचया भिनभिना रहीं थी । उसम म बन्धु आ
रनी था । बोना—यही वन्धु सबसे दुरी है । ट्टी बोना—नहीं मैं दुरी
नहीं हूँ । दुर तुम हा । दूष फन मेवा अत्र सब मुत्र व । किन्तु
भनुध्य ने अत्रका उपयोग किया तभी ये वन्धुमें दुरी हा मद । वस्तुन दुरा
ता भनुध्य का गरीर है ।

सायंकुरा ने घरवार का दुम का कारण मयभ कर छाड़ दिया और जगम मे जाकर २५ नम सिद्ध भ्य कहकर दीशा मरी । उन्होने सावा— मरी घात्मा सिद्ध स्वरूप है । घणुठ हा फर् है इस गुड करना है ।

एक साधु ने चार गिध्य थे । चातुर्मास निकट आ गया ता गुरु ने गिध्यों की परीक्षा लनी बाहा । एक गिध्य ने कहा—तुम सिंह की गुफा मे चातुर्मास करा । दूसरे स कहा—तप की बाबा के ऊपर सड रहकर चातुर्मास करा । तीसरे स बही करन का कहा जहा स्थिया पानी भरनी है । चौथे को ध्याना दिया—तुम उम वया के महा चातुर्मास माडा जिसस ससार दगा मे तुम्ह प्र म था ।

तीनों ने साधा—यह युवा है रूपवान है । एह वया के चकर म पढर भ्रष्ट हा जायगा । हम ता सर जस हागा धयना काम निबाल लगे । चौथा नगर की मवधष्ट मुन्दरी वया के घर पढुवा और बाहर चवुतेर पर बठ गया । वस्या ने उस घन्ने बुलाया । वस्या उम बन्त दिन पदचात् आया खबर बडी प्रसन्न थी । साधु ने वस्या ने अपने यह चातुर्मास बिताने का ध्याना भागा । वया ने बडी प्रमदना म उहें ध्याना दगा और उनके लिए पनग कीमता बिस्तर और सभी आवश्यक साधन जुगानिचे । किन्तु साधु अपनी चर्गाई पर जमीन पर बीठे । वस्या ने सेवा की प्रार्थना की । किन्तु साधु ने अस्वाकार कर दिया । वह काम याचना करती के धम का उपान मुनाते । परिणाम यह हुआ कि चातुर्मास की समाप्ति पर वस्या ने भा बहाचय बन ले लिया ।

दूसरे चातुर्मास मे गुरु ने दूसरे गिध्य को उसी वस्या के घर चातुर्मास बिताने भज दिया । वस्या ने भाप लिया—कितने पानी मे है यह । उमने बडी धम्मयना की और पलग बिस्तर दिये । साधु ने वे स्वीकार कर लिये । वह वस्या का भोजन भी करन लगा । अब साधु वस्या के चारों ओर महराने लगा । एक दिन उसने रत्तान की प्रार्थना की ।

व सो बाबा—मैं रत्नकवन हूँ । धरणी राजा का रत्नकवन माफा तो मैं
 मन्हारी इच्छा पूरा करूँगा । माधु राजा के मन्त्रों में गया और रत्न
 कवन चुरा लाया । क्या न उस काञ्चन मन्त्रों में कौन किया । उस
 माधु ने कहा—धर ! यह तो बन्धुव्य रत्नकवन है । मैं तुम अथवा नष्ट
 करे नहीं हा । बेना बाबा—रत्नकवन तो और भा मिन जायेने ।
 किन्तु यह मानव प्रावन बडा अपुन्य है । यह यदि तमन अथवा मर्वा किया
 तो यह पुत्रा नडा मिनगा । फिर धर नान महा हारि बाबा—तम
 मैं नीच गरीर में से क्या चाहते हो ? धर मन्त्र तमने यहाँ काञ्चन
 अथवा मर्वा । धर इतने तिन तुम भगवान का ध्यान करने तो माग
 मिन जाता । इस प्रकार जपन्तु कर उस समय माग म नगा किया ।

बन्धुन समय के तारा धामा म गुचिता धामा है । समय का
 आचरण करने वाले माधु धारमा के स्वच्छ का समझते हैं । धर उनकी
 धारमा निमन बन जानी है व धर की गुचिता का धार नहीं धारमा
 का गुचिता का धार ध्यान रहे है । व न स्वान करत है न मन्त्रावन
 करने हैं । धर भी स्वच्छ नहीं रहता । किन्तु उनकी धारमा पवित्र
 स्वच्छ और निमन हो जाती है । व गरीर का उपवास आत्म-शुद्धि के
 निमित्त करते हैं । धर उनकी वासना उनका दासी बन जाता है । मन
 पर पूरा नियमन होता है । जिनमनाचाय ने धीमन्त्रों के धर प्रत्यगों का
 सभी मजबूत श्रु गान्पूरा वर्णन किया तो धरक अन्धकारों के मन्त्र विचरित
 ज्ञान । किन्तु धारमा निविकार रहे । क्याकि उनके धरन्त का
 विकार समय के द्वारा दूर हो चुका था । गरीर धर उनका धरु धरु म
 रम गया था ।

हमसे और उनसे बडा धरन्त है । धरन्तें तिन बाह्य पर गरीर
 पर रहती है किन्तु उनकी दृष्टि धरन्त-आत्मा पर रहता है । हम गरीर
 के रूप रम की मुन्त्रता मानते हैं और वे मुनि धारमा का गुचिता का
 मुन्त्रता समझते हैं । हम गरीर के श्रु गान् म तिन राज तने रहते हैं

शरीर व आत्मा की सज्जा क लिए अपना सारा समय लगात है । परि
 ग्याम यह जानता है कि हमारी दृष्टि केवल शरीर क रूप मौल्य पर
 अटकी रह जाती है व आत्मा के रूप तक नहीं पहुँच पाता । जबकि
 मुक्तिया की दृष्टि म शरीर अंगुचि का आगार है । व इस अपावन
 आगार मे एक रत्नमय का अधिर नेत्रस्वी रखना चाहत हैं । जिनकी
 धाम्मा शुद्ध निमल बन जाती है उनका अपावन कहवान वाला शरीर
 भी पावन शरीर मय बन जाता है ।

जानी योग म शरीर के द्वारा आत्म भाषण करके मोक्ष का
 प्राप्ति करते है परंतु अजानी योग शरीर का मात्र न समझ करके इस
 शरीर के द्वारा अनेक प्रकार के पाप करने अथवा निन्द्य गनियो के भ्रमण
 करत हैं । जन्म मरण भा मग शरीर क पाव ही है । इस शरीर के
 लिए आ मा का अनेक दुख उठान पडत है । मानव शरीर की क्षमिता
 अंगुचिता मायूम हान पर भी जो अनादि पाप म इस पर मोहित होने
 पाय है वे उच्च अरम्भा जाने पर भा मग शरीर क मोक्ष को नहीं छोडत
 है । कहा भी है कि—

गात्र सकुचित्त गतिविगलिता, दन्ताश्च नाश गता ।
 दृष्टिभ्र इयति रूपमेव ह्लसते, यत्र च तालायते ॥
 वापय नव करोति बान्धवजन पत्नी न शुश्रूषते ।
 धिक् फष्ट जरयाभिभूतपुरुष, पुत्रोऽप्यवज्ञायते ॥

उदाहरण मे शरीर सकुचित्त हो जाता है । गति भी बिगल हो जाती
 है अर्थात् हाथ पैर हिलन लगत है । ठीक प्रकार चल फिर भी नहीं सकता
 है दात गिरने लगते हैं आँखा म दिखारि नहीं दना राग प्रतिदिन बढ़ता
 जाता है पुत्र म सार गिरन लगती है, बंधुजन तिरस्कार करत है स्त्री
 सेवा नहीं करता है । इसीरुप आवाय बतला रह है कि ह जीव ।
 नू मय सबका साक्षर पर भव मे गुड यति प्राप्ति की इच्छा नहीं

रना है यह कितन आत्मप की बात है। इमनिण भयज्वावा का चानिण
 र दनिया का शक्ति जब तक निधिन न हा गरीर मे जब तक बन है
 प्रप पाव मे बन है कान म मुनरे की शक्ति है अन्वाम देखन का
 शक्ति है नव तक इस जाव का आत्म-भाषन करना ही चानिण। कान
 ग है—

यावत् स्वस्थमिद फलेवरगृह यावज्जरा दूरतो ।
 यावच्चेन्द्रियशक्तिर प्रतिहता, यावत् क्षयो नायुष ॥
 आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा, काय प्रयत्नो महान् ।
 प्रोद्दीप्ते भवने हि कूपखनन, प्रत्युद्यम कीदृश ॥

जब तक यह गरीर रूपी घर मौजूद है जब तक चन्द्रिय शक्ति नष्ट
 नहीं हुई है जब तक आयु पूर्ण नहीं हुई है जब तक विद्वान् योगी का
 अपने व्याग व निण श्रमणा प्रयत्न करना चाहिए। परन्तु मूल श्राव
 श्रम समान गरीर का हा अपना मुख मानकर रात दिन श्रमक पीछे नव
 चरन है। आजकल दुनिया मे गरीर का मुन्तर बनाने के निण प्रनव
 प्रकार के पाउडर सावुन तब निकर हैं। बन्धिया-बन्धिया कपडे पहनकर इस
 अपवित्र गरीर का हम पवित्र बनाना आनत हैं। परन्तु आजकल अपवित्र
 चम्पु पवित्र नहीं ही सफा है। इस शहर के अन्तर पहा दृष्टा सम्भक दान
 ज्ञान आरित्र रत्नत्रय हा गूढ है, निर्विकार है अज्ञान है अविनाशा है
 हमारा मुख और गालि को तन वाना है ऐसा ममक करके बुद्धिमान योगी
 का पवित्र आत्मा का हा ध्यान करन सब अशुचिमय समार और शराव
 नाश से मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहिए। और आत्मा का मलिन कन्द
 चाल भावर के लोभ कषाय का दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

उत्तम समय धर्म

समय का प्रकार का है— पर इन्द्रिय समय दूसरा प्राणी समय । पाप स्थावर और यत्न इनको रक्षा करना इसको प्राण समय कहते हैं । पाप इन्द्रियों का अपन वाक् में रखना इसको इन्द्रिय समय कहते हैं । बिना समय के मनुष्य गाभा का नहीं पाता है । समय का अर्थ दण्ड है । विषय कषाय को सालसा का कम करना आत्मा को कषाय युक्त बनाने का न इन्द्रिय विषय सम्बन्धी पदार्थों का त्याग करना । मयमा जीव हमारा सुख से जीवन बिताता है । जब तक मनुष्य के अन्दर बचन नहीं होगा तब तक वह जीव अपना रक्षा नहीं कर सकता है । इसलिए आचार्य ने प्रत्येक मानव का समय से रहना अत्यन्त आवश्यक बताया है । समयही कभी भी अपने आत्मा को सुख और गतिमय नहीं बना सकता है । जब यह जाव समयमा बनता है तब दूसरे का भी समय से लाकर मुक्त का लाभ पहुँचाता है । अतः प्रत्येक मानव को समय से रहना अत्यन्त आवश्यक है । आजका के युग में तागा का चारित्र्य के प्रति श्रद्धा कम हो गया है । बिना चारित्र्य के मनुष्य कस भी निर्णय माना जाता है । तब भी है कि -

धन गया तो कुछ नहीं खोया ।

स्वास्थ्य गया तो कुछ खोया ।

चारित्र्य गया तो सब कुछ खोया ।

मन बहावन के अनुसार जब तक मनुष्य के अन्दर चारित्र्य नहीं है तब मनुष्य एक कौड़ी का भी नहीं है । पर्युपण पर मनुष्य को सदाचार के उन्नत गिनकर पर पहुँचाने के लिए आता है । चारित्र्य को प्राप्त करने के लिए ही यह परम पवित्र पद है । यह बात हम सब जानते हैं कि मनुष्य अपने सदाचार से अपना उन्नति करता है और दुश्चारित्र्य से

घरना सम्पन्न है। लेकिन हमें माय माय यह भी जान लेना चाहिए कि सद्चारित्र्य से केवल हम ही ऊंचे नहीं बनते हैं। घाम पाम वाला भी भी उंचे बनाने है और दुःखारित्र्य से हमारा हाथ हम नहीं हाना है परन्तु हमारे साथ साथ हमारी का भी पतन होता है। सद्चारित्र्य धरने माय उंची दुमरे का भी ऊपर उठाना है। बड़ी दुःखारित्र्य धरने माय दुमरे का भी नीचे गिराना है। इस बड़े राग मत्तमक हाथ हैं धन धाराय भी मत्तमक होता है। नारागा मानव भा रागा मानवमण से धार रागी धन जाता है उना प्रकार रागा मानव भा स्वाच्छर वापारण से धार स्वयं बन जाता है। उगा प्रकार सद्चारित्र्य और दुःखारित्र्य भी होता है।

धरने कोई मनुष्य दुःखारित्र्य ही या वह साथ पाता हा या बाधा गिराने पाता हा दुमरा मानव भा उमका मत्तमक बड़ी काम करन की इच्छा करगा। लेकिन यदि कोई मनुष्य धरने पर से साथ नहीं पीता हा गिराने नहीं पीता ही या उमक माय उमक धर काम भी उन धरना से दुःख रह सकी। धरना दुःखारित्र्य मानव धरने का भी पतन करना है। इसी तरह सद्चारित्र्यमान पुण्य धरने माय दुमरा का भी भना करना है। सुनिये से मत्तम ऊंचा गया यहा है कि हम धरना जीवन धरना बनावे और उमकी धर दुमरे पर भी धरने धरिण नहीं ना कम से कम धरना भा धरना चाणिक जिमसे हम सद्चारित्र्य धरने बने। धरिका से जब उमका प्रया धरना थी तब बड़ी क प्र मीठम मत्तम निवन न म प्रया का दूर करन क लिए कई प्रयत्न निए। मत्तम लिए एक मध भा धरिणिया किया और साया से कहा कि मत्तम से धरने टो बा० क बायारा क धरने स्थान दुमरे पर धरिणिया धरने मानव क लिए धरने से कना भा धरने नहा मियगा। जब एक मदा दुमरा धरने मारी गिरने क पाता का बिगाड मता है उगा तरह एक धरिणिया मानव भा मत्तम मत्तम की मत्तम कर सकता है। धरने कहेंगे कि विचार धरने मानव की क्या हम्ना है जो सारी दुनिया को मत्तम कर मव। लेकिन धरने साथ हम पर ननिक गीर करेकेनो

हमारे पत्र बाब धामानी मे सम्बन्ध मर्गे । हम यह प्रत्यक्ष दरसन है
 कि रिशा तालाब मे अगर वाई कचड डाना जाय तो इगला धमर गाने
 तालाब म हा जाता है । इमी तरह मनुष्य के धनुष परमाणु भी धारे
 धार सारे विदय मे फन जाते है इगलाय कारित्रीहीम मानव कचड धपनी
 ही हानि नही करना लकिन धपन गाध गाध मार समार की हानि
 करता है । भले हा एक मनुष्य लषान म रंग दृष्टा लप कर । पर उमर
 धुभ परमाणु सारा दुनिया क परमाणुधा म मिलकर बन्द्याग कर मकत
 है । ऐसी धत्रीय शक्ति एन परमाणुधा म रहनी है । एन एन मिनट मे
 घौन्ह रात्रु लोर म फन जाता है यह हमारे रैन धाम्रों का एन
 प्रमाण है । अभी भा गया धाप लोय परमाणुधा का शक्ति मे सन्ध
 रसते है । जा यन्तु मितना सूम्म होनी है यह उतना ही बलवान हाया
 है । धात्र विनर का नाय करमे के लिये धगुबम बना है । धगु बिलना
 सूम्म हाता है । अर यह एक बगानिक मय है कि सूम्म वस्तु इगला
 बनवान होती है । धाप जानने भी है कि काम के एर दुपडे म हीरे क
 एक छोटे म कण मे उधाना प्रकाय होता है क्याकि यह उसमे बहुत छोटा
 हाता है । लकिन विचार क परमाणु ता एतम भी सूम्म होते है जिठ
 हम धपनी धायो से देग नटा मकते है । य तो इनमे बलवान होने
 हैं कि इनकी शक्ति का कोई माप भी नही हो मकता है । जब धाप धम
 म्यान धर्मात् मन्दिर मे जान है तो सुन्दर सुन्दर भावा मे मग्न हो जाते
 हैं । जब मन्दिर के बाहर निकनरर धाप बिमी मिनमा हाल म
 जाते हैं ता धापक विचार वहाँ क बालावरण के अनुमार धपविन हो
 जाते है धोर धाप पर विलासी भावनाधा का धतर छा जाता है ।
 इसका कारण क्या है ? यही कि धापक मन्दिरों म महापुरुषदा के
 सद्बिचारा क परमाणु फने हुए है । अत वे लिपन जाते हैं धोर
 धापकी सद्बिचारा मे लीच कर ल जाते है । लेकिन मिनमा धरा मे
 तो विनास का ही बालावरण होता है । धन वहाँ जान पर दुधचरित्रता
 क परमाणु धापकी लिपन्ये ही धोर धापकी सुर माग पर धमीटणे ।

पंगता है। इसलिए आज इस युग में प्रत्येक मानव का गयम का जन्म है। बिना गयम के मनुष्य की उन्नति नहीं हो सकती है। हमारी मन्तान संयम के मस्कार में हानि के कारण आज चारित्र्य की उन्नति निरन्तर पर पहुँच रही है। आजकल के छात्रों के चरित्र पर गन्त मस्कार हानि के कारण आज हमारी मन्तान निर्बल बनती जा रही है और उमम धनेत्र प्रसार के दुष्प्रसन्न कुशाचरण गन्त मस्कार फल रहे हैं। गायम में भी गन्दगा है। स्वान पान में भी गन्त है। दुनिया उमक पीछे पागल हो रही है। आचरण के नाम से चिढ़ जाती है। आजकल के लोग चारित्र्य का या संयम का पगन् नहीं करते। सन्तान उत्ति का मिटाना चाहते हैं। इसलिए आज पापाचार का बोलवाला हाना जा रहा है। बिना बिना मनुष्य के चरित्र राक्षस वृत्ति बढ़ती जा रही है। स्वात्पान की शुद्धता अशुद्धता का विचार नहीं है। आजकल मानव मासाहारी होता जा रहा है। मासाहारी बहुत कम नजर में आते हैं। पुराने धर्मशास्त्र धर्म के पीछे दौड़ धूम और धन प्राण के समान उमकी रखा करने के लिए कोपित करने हैं परन्तु हीनगयम वाले जब उन सागो की समिति में मिल जाते हैं उनका भी उमी प्रचार होकर रखा पड़ता है। पहले जमान में राजा स्वयं चारित्र्यवान् होते थे। धर्म प्रजा भी राजा के माग पर चलती थी। आजकल धर्म की गरम्परा परिपाटी मलिन होने के कारण मनुष्य के चरित्र चामिक भावना तन्त्र हो गई है। यह पवित्र धर्म भूमि कहलाती थी। तन्त्र धर्म भूमि में उत्पन्न हानि वाले धर्म कहलाते थे उनका चारित्र्य विचार और मस्कार भी धर्म होते थे। धर्म भूमि में उत्पन्न होने वाले महापुरुष हमें मास मास की परिपाटी सुरक्षित रखने के लिए धर्म अधिकांश में तीन पुरुषार्थ धर्म धर्म धर्म सेवन करते थे। इन तीन पुरुषार्थों के द्वारा मास पुरुषार्थ का साधन कर लेते थे। इसी पुरुषार्थ पर भगवान् कृष्णभद्र से लेकर महावीर तक चौबीस पुरुषार्थ ने जन्म लेकर अपने जीवन को हमें के लिए सुख मय बना लिया है। गयम तथा सन्तान का माग इसी भूमि में निर्माण

हुमा है। तब हमारा भाव क्लेश्य है कि इस पवित्र भूमि में जन्म लेकर हम अपनी आत्मा का पवित्र बनावें और उहा मन्मथुग्गल का अनुकरण करके उच्च चारित्र्य का गिअर पर पहुँचन का प्रयत्न करें और अपना सन्तान का सुमस्कारा में बचावें। जब तक हम अपना सन्तान में मत्नाचारपूशक सुमस्कार डालने का प्रयास नहीं करगे तब तक भारतवर्ष का उत्थप नहीं हो सकता। और राष्ट्र की उन्नति नहीं हो सकती।

इसलिए प्रथम मानव का स्वयं और पर का बन्धन करना है अपनी आत्मा को उन्नतिमान बनाना है ता मद्वाग्नि की तरफ मुड़ने का प्रयत्न करना चाहिए। मयम ही मनुष्य का जीवन का सुधारन वाला है मयम ही आत्मा का स्वभाव है। मन्वित्त उत्तम मधम उत्तम चाग्नि की भावना रख करके हीनतपम और पाप-बुद्धि को दूर कर मनुष्य का अपना मानव जीवन सफल करना चाहिए।



उत्तम तप धर्म

संयम पावन का शरत का तप हो सकता है। मयम का बिना तप नहीं हो सकता। यदि हवा चलना रहे तो हवा में तरंगें उठनी हैं हवा शांत हो तो तरंगें भी शांत रहती हैं। इसी प्रकार मन की वासनायें शांत रहें तो मन की तरंगें भी शांत रहती हैं। यदि मन में वासना हो तो मन में नाना प्रकार की तरंगें उठा करती हैं। मन की ये तरंगें तप का द्वारा शांत रहना हैं। हमें पुण्योत्थ में मनुष्य मन्वित्त उत्तम कुल उत्तम धर्म सभी साधन मिल गये। ये सब पूर्व जन्म में किए हुए तप का ही फल है।

रूपवन्मा नाम का एक धार्मिक महिला था। वह सत्त पचमी के व्रत किया करती थी। पाच पाच दिन तक उपवास करती थी। उसके फलस्वरूप वह बहुत मय्यन् और सम्भ्रान्त कुन में पैदा हुई थी। उस किमा प्रकार का कोई दुःख न था और वह राना भी नहीं जानती था।

जावन भ यह कमा राई न था । इसलिये धर्म कभी बिसा का रात हुए
 ग्य लती थी ता वह समझता थी कि यह काई गाता है रहा है । एक
 दिन वह मर्ति कर जा रही था भाग मे एक स्त्री जात जात म रा रहा
 था । रूपवधमी का वह राता बडा घाटा लगा उमने समझा कि यह
 भी कोई मुन्दर गाना है अतः वह मुने के लिये उग स्त्री क पाग गई
 और उराक पाग जाकर उमके गान की बड़ी प्रशंसा की । स्त्री इममे
 चिढ़ गी । जब रूपवधमी अपने घर चली गई तब उग स्त्री न गन गन
 म एक भयकर काना सप गरीत और एक मन्त्र मे यन्त्र करके रूपवधमी
 क पास भज लिया और कहना लिया कि इममे एक बरत मुन्दर रत्न
 हार है इम अपने पुत्र क गाय निवन्धवा लता । रूपवधमा ने अपने पुत्र
 को बुनवाया और उससे कहा—अप तरा भोसी ने तेरे लिये हार भेजा
 है । तू तो बार नववार मन्त्र पढकर इसे निवात ल । बच न उमके
 कथनानुसार नववार मन्त्र पढ कर हाथ डाला और उममे स हार निवात
 लिया गया ता वह वस्तुतः बहुत ही बन्धुय रत्नहार था । रूपवधमी
 को बडा आश्चर्य हुआ कि इतना कामता हार क्यों भेजा है । याडा दर
 पात यह स्त्री घाई और उमने यह समझा कि बधा मर गया गया और
 रूपवधमी जो मुभ चिन्तन मर्ति थी बन् रा रहा हागा । उमने आश
 पूछा—बन्धु का क्या हाल है । रूपवधमी न अपनी महज प्रमन मुग्धा
 से उत्तर लिया—नन्हा बहन ! तुमने नाहक इतना कीमती हार क्यों
 भेजा है । बधा पहनता थाड हो है । यहाँ कई पडे हुए है । स्त्री को बडा
 आश्चर्य हुआ भी ता इसक लिये सप भेजा था वह रत्नहार कस
 बन गया । उस स्त्री न कहा—देखू ता वह रत्नहार ऐसा काई कामती
 तो नहा था । उसने जदाही रत्नहार लिया वह सप बन गया और उग
 इस लिया जिसमे तत्काल उसकी मरु हो गई । वास्तव मे सप द्वारा
 कर्मों की निजरा हाती है और ससार मे सभी प्रकार का भागा की
 सामग्री प्राप्त हाता है ।

शुद्धस्थानम म जा पचन्द्रिया क निग्रह का अभ्यास करता है वह हा साधु जीवन में तप कर सकता है। गरीर का मोह छोड़ बिना और शक्तियों के विषयों का नियमन किये बिना तप नहीं हो सकता। आत्मा अनात्मिकान म पर को अपना समझ कर मिथ्या भावनाओं में फना घना भा रहा है। मिथ्या भावनाओं को तप द्वारा ही सम्यक् किया जाता है। सम्यक् तप द्वारा पर सचि हृत्कर आत्मसचि जाग्रत हो जाती है और वह पर का मिथ्या समझ कर केवल आत्मिक गुणों में रमण करने लगता है।

आजकल लोगो की प्रवृत्ति बकरा का सा हो रही है। जिन गत मुक्त बनना रहता है। घर में रहते हैं तो वहाँ खाने रहते हैं। दुकान पर बैठते हैं तो वहाँ खाने रहते हैं। शोर्ट चाटवाला भाषा तो बुना विषय। बफ वाता भाषा तो उमम बफ ने ली। भल्ल दही बनेवाला भाषा तो घँठ गय उसक सामन। न भक्ष्याभक्ष्य का विवेक है न स्वास्थ्य का ध्यान है। कवन रसना इन्द्रिय के अधिन होकर अन्तर्गामी ममान्तर वस्तुओं खाने हैं। यह नयी खाने कि बनाने वाला कौन है कस पण्य है य। सडे गल ना नहीं हैं। परिणाम यह होता है कि स्वास्थ्य विराधी मिच खटार् और मसाना का भरमार स स्वास्थ्य खराब हो जाता है। उसस स्वय को बष्ट होना ह। साथ ही डाक्टरों क यहाँ नित्य हाजिरी दनी पड़ता है। घर में जितना खच हाता है उतना ही डाक्टर का बिल बैठ जाता है। जिन्गो पिसर पिसर कर बीमारी में बिनात हैं। किन्तु फिर भी अपनी जिहा नातुफता नहीं छोड सकत। इन्द्रिय विषया की आधीनता यहाँ तो है।

इस इन्द्रिय विषयाधीनता का एक दुष्परिणाम और होता है। स्वास्थ्य विरागी पण्य खान से जब स्वास्थ्य पतना हो जाता है तो मन में स्थिरता नहीं रहती खचलता बढ़ जाती है। मन इधर उधर भटकता रहता है। क विषय वायनाया की ओर अधिक उन्मुख हो जाता है।

उसकी चष्टायें विचार व्यवहार उसी प्रकार का हो जाता है। उसका मनोबल समाप्त हो जाता है सकल्प शक्ति क्षीण हो जाता है। वह किसी महान् काम का सकल्प नहीं कर सकता। संकल्प कर लेता टिक्ता नहीं।

एक बन्दर न किसी मुनि का उपवास सुना और सुनकर उसने उपवास करने का निश्चय कर लिया। उसने उपवास तो किया किन्तु उसका मन बड़ा चंचल था। लोपहर तक तो वह किसी प्रकार गाढा खींच ले गया किन्तु फिर भूख और प्यास असह्य होने लगी। वह फल वाल एक वृक्ष पर गया और एक फल साइडर हाथ में ले लिया। वह सोचने लगा—मरे तो उपवास है। मैं क्याऊँगा थोड़े ही। लेकिन हाथ में इसे लाने में क्या हज़ है। किन्तु उसका मन तो चंचल था। थोड़ी दूर बाद वह फल का मुँह के पास ले गया फिर भी वह सोचने लगा—मैं सा थोड़े ही रहा हूँ। लेकिन मुँह के पास इसे ले जाने में नुकसान क्या है? थोड़ी दूर बाद उसका मन नहीं माना और उमन वह फल मुँह में रख लिया। तब भी वह माचता रहा—मुँह में ही तो रखा है। जब वह फल पेट में चला गया तो सोचने लगा कि मैं क्या करूँ वह पेट में चला गया और जब एक फल पेट में जा सकता है तो दूसरा फल क्या नहीं जा सकता।

यह एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। इसका आशय यह है कि एक बार मन को नियंत्रण में न रखा उसमें कमजारी आई कि व्रत भंग हुआ। फिर व्यक्ति भाग निकालता है जिससे वह व्रत का आडम्बर कर सके। अपने मन को सात्वता दे सके कि मैं व्रत पाल रहा हूँ और कोई भाग निकालकर अपनी इन्द्रिय वासनाओं को पुष्टि भी कर सके।

आजन्म बहुत सी माता बहनें अप्रुमी चतुर्शी को हरी नहीं खाती। किन्तु उनकी हरी की वासना नहीं जाती। हरी का तो त्याग करती हैं किन्तु हरी की वासना का त्याग नहीं करती। व्रत व उसके लिए रास्ता

निवासी हैं। वे हरे साग सम्बन्धी नहीं मानीं किन्तु उन्हें गुलाबर और उनका साग बनाकर हरे साग का म्यान्गेर परिष्कृत का अनुभव करता है।

वस्तुतः आत्मा का अहित करने वाला तो धर्म है—विषय और कर्माय। कहा भी है—धर्म के अहित विषय कर्माय। हमारे त्याग धर्म के मूल में इन विषय कर्माय का त्याग की ही दृष्टि प्रधान है। जो साग जन धर्म का त्याग साग का उपनाम करते हैं—क्या रखा है त्याग में दो चार चीजें छोड़ने से बड़ी धर्म नहीं जाना—ऐसे लोग तथा जो त्याग करते हैं वस्तुतः का अहित फिर भी उन वस्तुतः की श्रद्धा और आत्मा बनी रहती है उनके मन में ऐसे लोग दोनों ही जन धर्म के त्याग साग का उद्देश्य नहीं समझते। त्याग साग से वस्तुतः के त्याग का भी अर्थना एक महत्व है अहित उस त्याग की धारणा तभी है जब उस वस्तु का साग भा त्याग दिया जाय उसकी इच्छा भी छोड़ दी जाय।

वारिषेण राजा अश्विन का पुत्र था। सभी राजसी धर्म और धारणा का साधन मुन्यम प उम। किन्तु मन से विराग था प्रारम्भ से ही। वह मुनि-दीक्षा लेकर जगल में चला गया। एक बार व विहार करते हुए राजगृही का बाहर भाकर ठहरे और नगर में अर्थात्के लिए प्राय। उनके बाल यथा सामन्त ने उन्हें पहनाया। जब वारिषेण अर्थात्के पंचानु जाने लग ता साम भी उन्हें सिष्टाचारवशा छोड़ने उनके साथ चन सिष्टा नगर के अन्त निराल यद किन्तु मुनिराज ने उससे सौटने को नहीं कहा। अचारा साम क्या करे। कई बार सवेत से कहा भी, किन्तु मुनिराज मौन चनन हा गये और बिना बड़े माम वापस बसे जाय। जगल में पहुँचे। वारिषेण ने उस समझाया और सोम भी मुनि हो गया। वह मुनि तो हा गया किन्तु उसका मन स्त्री में ही अटका रहा। वह एक दास का भी अर्थात्की स्त्री एकांगी वाकिता को मन से न निराल गया। दिन बीतने गये और वाकिता उसके मन प्राण परे

घासन जमा कर बैठ गई। स्वप्न में जागरण में मय कान शवत्र उगे
 काजिला को याद सनाती रहो। वारियेण ने दगा। व समझ गये—
 सोम के मन से स्त्री का माह्र नहा जिकन पाया। एव त्ति के सोम का
 मकर राजमहना में पहुँचे। वारियेण की माता भवता का विधास पा
 अपने पुत्र की हृदता पर। फिर भी उसने परीक्षा मना चाहा। उसने
 एक स्वर्णासा विष्टवाया और दूसरा काष्ठामन। सोम ने दोनों घासन
 देखे और घड़ी सातहा व साथ स्वयं फलक पर बठ गया। वारियेण
 निरीह भाव से बाठ व घासन पर बठे। तब वारियेण अपनी माता को
 सम्बाधित करके वान—मरा सभी स्त्रियों को शृ गार कराकर तुम यहाँ
 से घासो। भवता एक घार ता वारियेण व इस घास म विस्मिन
 हुई। किन्तु उसने सभी वस्तुओं का शृ गार-नाजा करके घास के लिए
 कह दिया। बत्तीस बहुए वस्तुमूल्य वस्त्राभरण पहन कर घास ता उनकी
 सौम्य दृष्टि से सारा वस्तु ददाप्यमान हो गया। ऐसा भ्रम माना वा
 माना य सुरलोच की स्वागनाय हा या नाम-व-याये हा या विभ्ररिया
 हा। सोम सत्मा घासिभूत इस रूपराग को ठगा मा देगता रह
 गया। उस अपनी भाँवों पर विदरास नहीं आया कि मैं मत्स्यलोच में
 हूँ। तभी उसे वारियेण की मुह गम्भीर गिरा गुनाई पड़ी—सोम ! देख
 इस राय का मैं भावी सम्राट् था। मर पास घासन के सभी माधन मौजूद
 थे। ये स्वागनाओं जसो बत्ताम स्त्रियों थी। किन्तु मैं इनका राज्य
 का सबका आत्म बल्थाण व लिए त्याग कर दिया। किन्तु तू घर घार
 छोडकर भी मन से अपनी काजिला का त्याग नहीं कर सका और तूने
 जावन के य वद्वुमूल्य त्ति व्यथ गवा त्ति। वस्तुओं का त्याग नहीं होना
 वस्तुओं के राग वा मोह वा घासक्ति का त्याग वास्तव में त्याग कहलाता
 है। सोम की समझ में यह तथ्य आ गया, उसकी भाँवें सुल गई और
 तत्काल उसने वारियेण की नमस्कार करके मोह का त्याग करने का
 सबल्य कर लिया।

कहने का प्रयोजन यह है कि त्याग भानर का पर वृत्ति का किया जाता है। पत्नय तो हमस वृथक हैं ही। उनका छाडना छोडना क्या ? किन्तु पत्नयों का लकर हमारे मन म उनकं प्रति जो भावति है इच्छा और सात्तसा है और जिस इन अपना मान कर अपने मन मे सजो रह है, उसका त्याग हा वस्तुतः त्याग है। वडा त्याग तप कहना है। हमलिए गाम्त्रकारा न कहा है—

इच्छा निरोधस्तप

मर्यान् इच्छामा का अभन तप है। जा प्राप्त है इच्छा केवल उसकी ही तथा हाती। इच्छा उसकी भा होता है जो अप्राप्त है जो हमारे पास नहीं है। हमारे मन म इच्छायें आनाभाव्यें तिन रात उमडता घुमडती रहती हैं। एक इच्छा पूरी हा जाय तो उसकं स्थान पर चार नई इच्छाय आकर खडी हो जाती हैं। पत्नयों की मसार म सीमा है किन्तु इच्छामों की तो कोई सीमा ही नही है। कुछ इच्छायें राग का लकर हाता है। कुछ द्वेष की लकर होती हैं। कुछ इच्छायें कपाय न भाषार स हाती है और कुछ इन्डिय विषया के कारण हाती हैं। इन प्रकार इच्छामा कं नाना रूप है नाना भेद हैं। उन इच्छामों को दवाने का नियन्त्रित करने का प्रयत्न करना चाहिये। इच्छामा का यह नियमन ही तप कहना है।

तप की पूण मर्यान् ता साधु-जावन म ही मभव हाती है। वहा तो मव्यागा जावन होता है। इसनिये मन की हर रंग-द्वेष की वासना पर पूण नियमन रहता है। किन्तु गृहस्थ जीवन मे भा तप का अभ्यास किया जाता है। जिनमे गृहस्थ जीवन मे तप का अभ्यास नही किया, वह साधु जीवन मे प्राय सपन नही हो पाता। इन गृहस्थ भवस्था से ही तप का अभ्यास करना उचित है।

तप दो प्रकार का है—बाह्य और आभ्यन्तर। बाह्य तप शरीर के द्वारा किया जाता है और आभ्यन्तर तप अपने अतर मे आत्मालोचन

द्वारा किया जाता है। दानों का हा छ छ भेन है। बाह्य तप के छ भेन य है—अनशन ऊनांर भिभाचरी रमपरित्याग विवित्तप्राम्यासन और कामभंग। इसी प्रकार आभ्यन्तर तप क भी छ भेन हैं—प्रायश्चित्त विनय वयाहृत्य स्वाध्याय व्युत्सग और ध्यान।

पारो प्रकार के आहार का त्याग करना यह भगान कहलाता है इस ही उपवास कहते ह। उपवास का अर्थ है आत्मा क निवट वास करना। जिनका आत्मगर्षि हा गर् है और बाह्य से दृष्टि हट गई है वे ही सहा मायनो मे उपवास कर सतत ह। वास्तव मे अनशन उपवास का पूरक है। उपवास क बिना अनशन नहीं हाता। जिनकी दृष्टि बाह्य पदार्थों की ओर है उनका अनशन कबत संपन कहलाता है। भूखे रह को वास्तवकारों न अनशन नहीं कहा वलिक जिनकी अन्तदृष्टि निम है और जा यह समभते ह रि म इच्छियो और मन के विषयो प्राधीन ह मुझे इन विषयो म सुखारा पाने का निरन्तर अभ्यास बना ररना है वे पारो प्रकार के आहार का त्याग कर दते ह। उनकी दृष्टि विषयो क त्याग की जानी है। इसीलिए वह अनशन या उपवास कहलाते है। कई निधन व्यक्त साधन न मिलने क कारण भूया रहता है य परिस्थितिवा कोई भूखा रंगा है ता वह अनशन नहीं कहलायेगा।

जा लाग अनशन नहीं कर सकते जिनकी राक्ति पारो प्रकार के आहार त्याग की नहीं उह भी विषयो क त्याग का अभ्यास तो करन ही है। इसलिय उहें आत्मनत्याग के लिये अपनी भूख से कुछ कम खाना चाहिये। उनके कम खाने का उद्देश्य विषयो का प्राणिक त्याग ह। जो व्यक्ति स्वास्थ्य की दृष्टि से ही कम खाते हैं, वह त्याग नहीं है और न वह ऊनांर हा कहलाता है क्योंकि उनकी दृष्टि स्वास्थ्य सुधार की है। तकिन जो आत्मनत्याग क लिये विषयो का त्याग करने की दृष्टि स कम खाने हैं वह ऊनोदर कहलाता है।

उपवास या ऊनाकर लप करते हुए यदि भूय की बाधा मरति ता यह विचार करना चाहिये—दूधे घनेहों बार मजदूरी में घन का त्याग करना उदा है। धात्र श्वेच्छा मे धाम्म-अध्याग क मन्नु उर्येय के विण मैन धम्म का त्याग किया है। उब उयमें धाहुमत्रा वपों ररन्नु । धात्र मुह इन्वियां विदर्या के धाधीन र्ही घोर धाम्मा इन्द्रिया के धाधीन रता । विन्नु धब धिने निम्बय कर निया ५ कि में इन्वियों क धाधीन तहीं भूगा बन्नि इन्द्रिया का धपने धाधीन रवत्तु मा । इन्वियां धब ता धम्म की दास बनी दुई थी । पर मरन पर परितृप्ति का अनुभव करती थी । विन्नु में न्य नामता क बचनों को ठारन का धाम्मा क र्ता मा । इसी हेतु धिने यह उपवास या ऊनाकर किया है ।

इस प्रकार माधु ज्ञान की साधना का अध्याग गृहस्थ णा में ही किया जाता है । तथा माधु ज्ञान समीपार करन पर उभय सुपन्न हा पाना है । ५म बुम्हार क्ख धे का घना में दन्त उपाता है इसी प्रकार माधु धाम्मा को लप द्वारा उपाता है । उपन पर उमकी धाम्मा सरा कृन्न बन जाती है ।

साधु धपन ऊगर ही निभर रहते हैं । उन्हें परावलयन स्वीकार नहीं है । वे भिन्ना मांय कर आहार सत्र हैं । विन्नु मापन का धय याचना नहीं है । वह जो सिद्धरति है । साधु इन्विया घोर गरीर का नाम बनाकर ररते हैं । उत धगर म वे धात्म तल्याण का काम सते हैं । जब धरार मे काम सते हैं तो उत दास को आहार भी दते हैं त्रियस वह बराबर काम करता रहे । विन्नु वह दास बडा उह्म है । उयसे जैसा घोर त्रितना काम लेना चाहते हैं वसा घोर उनना काम वह नहीं लेता है । धत्र उत दण्ड भी दते रहत हैं । व जब मिया का निम्नते हैं तो मन में क्रुद्ध धम्पती प्रतिज्ञा करके बचते हैं आहार के लिये पहगाहने वाला ध्यति हाय मे धमुक पत्र लिय हो । धम्य सकरा में निय ह्ना धमुक मरुण मे मरुगान्न के लिये सते हों । यदि प्रतिज्ञा के

अनुसार विधि मिल गई तो आहार से लेंगे, वरना लौं भावेंगे और अन्तराय मानकर आहार नहीं लेंगे। अथवा आहार के समय कोई अपराध मुन लेंगे अथवा वस्तु का नाम सुन लेंगे बाल आदि निम्न आयोग तो अन्तराय मानकर आहार छोड़ देंगे। उससे मन में किसी प्रकार की खिन्नता अथवा क्षाम आदि का अनुभव नहीं करेंगे। बल्कि इस अवसर को कम निजरा का कारण मानकर सतोष करेंगे।

वे आहार के लिए उचित समय किसी रस का भी परित्याग कर देते हैं। क्योंकि वे जिन्हा के स्वाद के लिए भोजन नहीं करते अपितु इस दास गरीर को बनाये रखने के लिए उस भोजन देते हैं। यह उपाय रस परित्याग तप है इस तप का आचरण करते हुए भी व मन में किसी प्रकार की अतृप्ति या विरसता का अनुभव नहीं करते। बल्कि इन्द्रियो के निराध के लिए इस तप को आवश्यक समझकर करते हैं। श्रावक भी गृहस्थ अवस्था में इस तप का बराबर अभ्यास करता है। वह कभी रविवार को नमक का त्याग करता है कभी दूसरे रस का। वह कभी कभी अभ्यास के लिए बिल्कुल नीरस भोजन करता है और फिर भी अतृप्ति का अनुभव नहीं करता है।

साधु कुत्ते की भाँति साते हैं। व जब करवट भी बदलते हैं तो सावधान होकर उठ बैठते हैं। पीछे स म्यान का आलेखन करते हैं। तब उस करवट से साते हैं। व चलाई काठ व पट्टे, गिला या भूमि पर शयन करते हैं। शृङ्गाम्या पर नहीं सोते। शृङ्गाम्या पर सोने से तो गहरी नीद आ जाती है। यदि साधु को गहरी नीद आ जाये तो व ध्यान-अध्यायन बस करेगा। प्रमाण आने पर व न सामान्य कर पायेंगे न तावा की दया पान सकेंगे।

श्रावक या उपवास के दिनों में पव के लिये व इसी प्रकार शृङ्गाम्या त्याग कर साधुषा की तरह शयन करते हैं। इसमें अहिंसा प्रमाण और ब्रह्मचर्य की पुष्टि का दृष्टिकोण रहता है। शृङ्गाम्या कोमल

धर्म्य और विस्तरों पर शयन करने का इस्तीलाग नियेध किया है क्योंकि उससे ब्रह्मपथ और उमती भावना गौना मे ध्यापान पहुचता है ।

कम की निजरा करने के लिए साधु धारतप करते हैं । ये शीघ्र ऋतु मे तपती हुई गिलाघा पर चिन्तिलताती धूप मे बैठकर ध्यातापन योग धारण करते हैं । धर्मा ऋतु मे पैडा व नीचे बैठकर और गिशिर ऋतु मे नीचे चिनारे बैठकर तपस्या करते हैं । वे कभी पत्यवासन से कभी पङ्गामन स और कभी पघामन स बठकर ध्यान करते हैं । काम मच्छर ध्याति नाना जीव उहे मनाते ह । कभी त्रु लोग उहें उपसग करते हैं । किन्तु वे सारे उपसग और परीपत्ता का निम्निकार भाव ग महन करते हैं । वे गारीरिफ कृषो का—साह वे स्वेच्छा से चुताये गण हों या हमरे जीवा के द्वारा लिये गये हा—शान्ति से सहत ह । कायसयग वा के कर्मों की निजरा का कारण सममने ह । ऐसे धनेवा उगहरण सास्त्रो मे धाये हैं जय मुनियो ने समी प्रकार के कृषो को शान्ति के साथ सहन करके धात्मा को शुद्ध मनहीन बनाया । पाण्डवा के सारे धंगो पर अगार के समान तपे हुए लोहे के भाभूपण पहना दिये गये । जिनपालिन मुनि को एक कासाकिफ ने छत समझकर लो और मुनों को गार उत तीनी के सिरो की शू हे के समान बनाकर प्राग जला दी और उपर चावल चडा लिये । तिसी मुनि को सिंह खा गया । तिसी को दयालनी गानी रही । किन्तु ये सभी मुनि उन उपसगों मे धवेचन रहे । क्योंकि ये कायसयेग लन का निरतर धर्म्यास करते रहे थे । उनकी दृष्टि मे धात्मा धमर है शरीर धात्मा स भिन्न है, पर है । उहें धात्म हिन की चिन्ता रहती थी, शरीर की नहीं । जा अपना नहीं है उसकी क्या चिन्ता करना । धात्मा को न कोई जला सकता है न खा सकता है फिर उसके लिए क्या चिन्ता की जाय । यदि धात्मा मे शोष लाभ मोह और विरार उरान हो जाए, तब तो धर्म्य ही चिन्ता की बात हो सकती है । क्योंकि उसमे धात्मा क

गान्ति कायलता, शत्रुता मुचिता घाति मुस नष्ट हो जान ह । म गुण नष्ट होन पर कठिनार्थ से मिलने ह । शरार चला जाने पर यह बार बार मिल सकता है । फिर मुनिजन तो प्रयत्न करते रहते ह कि यह शरार चला जाय सदा के लिए फिर यथा न मिल । उनका वायव्यता महान् प्रयोजन के लिए होता है ; वह स्वच्छता से प्रमादित प्रन है वायव्यता कोई नदी है । जहाँ वायव्यता के कारण वायव्यता बनस हो, वट उप नहीं रहल ता ।

सोमन्त नामक एक धावक था । वह षष्ठमी चौथ घादि पर लिषियों में गाँव के बाहर जाकर किसी सूय घर में एवान्त म तप करता था । स्त्री कुलटा थी । एक बार ऐसा मयोग हुआ कि सोमन्त नगर के बाहर चौदस के दिन जिस शूयागार में जा तप कर रहा था वह स्त्री उसी मकान में पलंग और विस्तार ले गई । उसके साथ उसका प्रमी भी था । उन्होंने पलंग बिछाया । अंधेरी रान थी । पता नहीं चला पलंग का एक पाया सोमन्त के पर पर टिका दिया । वे दोनों पलंग पर बैठकर बातचीत करने लगे । पलंग का पाया सोम के पर में मुस गया । उसे बड़ा नष्ट हो रहा था । उसने अपनी स्त्री को भी पहचान लिया । तिनू वह मन में पही विचार करता रहा— राग-द्वय करने अपनी भावना प्रसुपित करना ठीक नहीं है । नष्ट पुद्गल को है । मुझे नहीं । अपने इन्हीं सुम भावों के साथ उसका शरयु हो गई ।

सोम के घर पर एक बैल था । सोम प्रतिदिन सुपह उठे शमोकार मन्त्र सुनाता था उपदेश भी देता था । बन उसके उपदेशों से धार्मिक शक्ति का बन गया था । वह शमोकार मन्त्र जब तक सुन नहीं लेता था तब तक शरार पाना भी नहीं खाता पीता था । बैल सोम की न परकर उसे बूढ़ने चल गया । यह उसी शूयागार पर पहुँचा । उधर सोम की कुलटा स्त्री और उसका पार सुपह उठे । उन्होंने देखा कि सोम पलंग के पाये से उबरकर मर गया है तो उन्हें बड़ी चिन्ता हुई । सभी उन्हु बैल

दिखाई पड़ा। सम्बन्ध-सम्बन्ध माग के उसका। उन्होंने पत्र लिखा कि
 मैं बड़ा म। उसका बाप तथा न नाटक करना कुछ दिना। वह छठी
 कूकू का रोने लगी—हाय हाय र। वन न मरे पति का—रहना।
 कमा कृतघ्नी निराला यह बन। जिमका मर पति निराला का
 प उसा बम्बल ने मर पति का भार डाला। न्यक हक का कूकू का
 बहा भीड़ इच्छी हो गई। लोग ने बैल को मारना कुछ कर दिया।
 और सुभा उसका निराला करने लग। यह बारबार निराला का
 घाँसों से उमक घाँसू वह रह थ। किन्तु वह बोन नो नष्ट कर
 मान कर अपनी निर्दोषता सिद्ध नहीं कर सकना था। स्वयं ने
 रात्र-बार मे भ गय। बैल रात्र के सामने बाहर निराला
 लगा और घाँसू बहाना रहा। रात्र न कदा—मान्य रात्र है रात्र
 कह रहा है कि मैंने इसे नहीं मारा। वन क मुठ बं बड़ा का कूकू का
 दा। अगर बैल सच्चा है तो उसका मुठ नहीं बरस। कूकू का
 लाया गया। बैल ने उम्मान बड़ा उठा बिना और जगमगे। इस
 लागा को मच्छा बात का पता लगा।

बहने का अर्थ यह है कि गरीब को छिन हो बहने से ही
 धर्म से विचलित नहा होना चाहिये। अर्थ का इस का
 तप का अभ्यास करते हैं और अभ्यास करके कृष्ण की
 पूज तयारी करते हैं।

लेकिन अनेक लोग गरीब का निराला और निराला है।
 कोई कान पाठ लेते हैं। कई साधु भाव बना निराला है। स्वयं
 जगह स्थिर नहीं रहते, व बराबर रनिगा का कूकू का
 है। और नाना भाँति से छपर का कूकू का। कस विरा काय
 कलस का उद्देश्य आत्म-शुद्धि, शिष्य शिक्षा की बातों का विषय
 नहीं है वह काय कलस का नहीं बहाना।

आचरण करता रहता है। वह प्रमादवग सने हुए दोषों की शुद्धि के लिये प्रायश्चित्त करता है। कथा भी है—

प्राय इन्व्युच्यते लोकश्चित्तं तस्य मनो भवेत् ।
तस्य शुद्धिकरं फलं प्रायश्चित्तं तदुच्यते ॥

अर्थात् पाप का भय लोक-साधु लोक, चित्त का भय है मन। उसकी शुद्धि करने वाला कम प्रायश्चित्त कहलाता है। अर्थात् साधुजनों के मन की शुद्धि जिस काम से हो वह प्रायश्चित्त है।

सम्यग्दर्शन सत्याज्ञान सम्यक् चरित्र के प्रति बहुमान हो उत्साह और रुचि हो, इनकी प्राप्ति और वृद्धि का प्रयास हो तथा इन तीनों को धारण करने वाले आचार्यों आदि के प्रति आदर भाव हो, उनके गुणों का स्मरण हो, वह वित्त कहलाती है।

शरीर की प्रकृति ठीक न हो मात्रा आदि के कारण शरीर थक गया हो ऐसे मुनियों तथा गुरुजनों के पर आदि दवाने में उत्साह, उत्सास रखना वैयावृत्य कहलाती है।

ज्ञानाजन की भावना से आलस्य का त्याग अथवा आत्मा के सम्बन्ध में विचार करना स्वाध्याय कहलाता है। ऐसे प्रयोगों का अध्ययन, अथवा अपने आन्ति भी स्वाध्याय कहलाता है, जिससे आत्मा को वास्तविक स्वल्प का बोध हो।

पर वस्तुओं में ममकार करना या अहकार करना ही संसार की सारी मुसीबतों का मूल है। इनका त्याग करना त्याग की भावना करना यह युत्सर्ग तप कहलाता है।

और चित्त का चंचल रुति को द्योदकर मन को विषय-वधाय से हटा कर आत्मा की ओर एकाग्र करना ध्यान कहलाता है।

ये छह प्रकार के तप आम्पतर या अतरेग कहलाते हैं। साधु तो इन रूपों का आचरण करते हैं और आचार भी इन तपों का सतत अभ्यास करते रहते हैं। थावक धर्म साधु धर्म का सधु सस्वरण है।

साधु का आसन तो ताम्र का ही है। पहले साधु सोन संगम में पहाड़ों पर मुट्ठियाँ मारते थे। किन्तु बान के प्रभाव से गङ्गानदी की हानता के कारण तथा मृत्यु के लगे ही दक्षिण और प्रकृतियों की धार पहाड़ों की नीचे आ गई। इस कारण से यह साधु नगम के रहने लगे हैं। किन्तु अब भी उनका हृत्स के चरित्र में कोई निश्चय नहीं था। वे अब भी हम बीस पचास दिन का उपवास करते हैं। उनका गारा समय-समय भी उगान-उगान-धर्म-धर्म-धर्म में बनता है।

एक बार साधारण नमिनागर की महाराज राठवार पर। उन्हीं नाम एक जाति था। वह हृत्सोय-प्रत्यायाम धर्म का धर्म धर्मधी था। उसने महाराज को खर्चा करके दूत बना—मन को राठवार के लिए देवद प्रत्यायाम ही सर्वोत्तम साधन है। जो प्राणायाम नहीं कर सकता वह साधु नहीं है। उन्हीं प्राणायाम करने भी बताया। फिर बोला—आप क्या जानते हैं? नमिनागर की महाराज उसने बोले— ठीक है। जो प्राणायाम जानता है, वह धर्म में बैठे। जो धर्म में जाते, वह साधारण भाग गया।

साधारण में उन्हीं साधु की धर्म में समझ नहीं होता। जगता ही प्रवीं और मन पर अधिपति रहता है। दिव्य और कर्मात्मा के समझना वह बराबर प्रकृत करता रहता है। इसलिए जब साधु का नाम आता है, तब एक साधु उगा। भयभीत नहीं जाता। साधु को वह धर्म की परीक्षा निश्चि मानता है। वह साधु को महोत्सव मानकर उमका रखागत करता है और जीवन भर उसने महाराज-प्रद्वार के त्याग का जो धर्मगत किया था, उमका करम सीमा पर पहुँचा कर आत्मा के धर्म के धर्मदान करने का पुण्याय करता है। धर्म साधु ही उमका समय उम आत्मिक धर्म और आत्मा के धर्म सोल्य के अधिपति बन जाते हैं। और जो अधिपति नहीं बन पाते, वे उम धर्म और सोल्य के धर्म ही कर सके।

उत्तम त्याग धर्म

अनादि काल से यह जीव स्व का भूत कर पर द्रव्य को अर्पण मानकर उसे ग्रहण करता था है। इसमें उग स्व स्वरूप का ज्ञान नहीं हुआ। जब किसी समय से गुरु का उपदेश मिल आता है या जिनवाणी सुनने को मिल जाती है तब उस स्व का ज्ञान होता है। स्व का ज्ञान होने पर इस पर स अर्चि हा जाता है और तब यह पर का त्याग करने को और उत्साहित होता है। इस पर के ग्रहण से आज तक कभी सुख नहीं मिला हमें गुरु प हा टु स मिलता था है। जब दु ग्नायक करतु का त्याग कर त्या जाता है तब सुख गान्ति मिलता है। जब पेट म बन्ज हा जाता है तो खराबी को दूर करने क लिए एनिमा या जुलाब लेते हैं। गन्गी पेट म बना रह साफ न की जाय तो रोग पदा हा जाते हैं। यदि किसी स्थान पर गन्गी पडा हा तो उस महतर से साफ करा दत हैं। यदि साफ न कराया जाय तो यह गन्गी और सड़ जाती है। उससे दुग्धि फलती है राग फलने है। इसी प्रकार धारमा से राग, द्वेष कषाय धादि का जा मन इच्छा होगया है उनके कारण जीव का कभा सुख नहीं मिला, कभी गान्ति नहीं मिली। इसलिए सुख, धान्ति प्राप्त करनी है तो कमल का दूर करना ही हागा।

जिस मनुष्य की शक्ति एक मन बोधा उठाने की है उसके ऊपर दो मन बोधा रख दिया जाय तो उसे बहुत वेदना होती है। उस समय उससे भगवान का नाम सने या दान देन या पूजा करने को कहा जाय तो वह नहीं कर सकता। क्योंकि वह तो बोध के मारे मरा जा रहा है। इसी प्रकार आत्मा कषाय विषयो मिथ्यात्व धादि का बोध लिये फिर रहा है। उस बोध के कारण उसे अथार दुख हो रहा है। उस समय उससे कहा जाय—भाई! धम किया करो। तो वह धम की बात नहीं सुनेगा। वह जवाब देगा—मुझे फुलत नहीं है। मं ता मरा जा रहा हू तुम्हें धम की सूभी है।

कोई व्यक्ति भूमि से व्याकुल है। उम समय उस को उपाय का ना उम का अधिकारी नहीं लगता। उम प्रकार उम जाव क मृत्पणा की उपाय नहीं करे है। ऐसा अवस्था में उम त्याग का उपाय नहीं लागवता।

यह उम क कभी भूमि प्रवृत्ति करता है। कभी उम प्रवृत्ति करता है। दोना हा उमक नियम का बना हुई है। उम भूमि में प्रवृत्त होना है तो उमक परिणामों में रोज़ा रहती है। किन्तु उम उम प्रवृत्ति करता है ता पुष्प मलय कर सता है। उम पुष्प मलय का उपाय हान पर उम अच्युत गति अच्युत कुल धन रूप बभय मय भिन्नता है। किन्तु यह उम अमय का रूप का उम का पावर उम पर अभिमान करन लगता है। उपाय में उतराने लगता है। धारा भूत जाता है और पाव क माग में पड जाता है। उम प्रकार यह जाव उम मोर भूमि होना का हा बोझ उठाव करिता है। उम बाभ क कारण उम नाना प्रकार की व्याकुलताओं रहता है। नाना प्रकार के दुःख उपाय पडन हैं। यह बाभ उतारे ता उम राहत मिले। उम उम भूमि का त्याग नियम बिना ऐसे साक्षर उम कभी नहीं मिल सक्ता।

त्याग दो प्रकार का होता है—एक उम त्याग और सवदय त्याग। एक उम त्याग शृङ्खला क होता है और सव उम त्याग साधुधर्म के होता है।

यह उम जमान में शुरू से लाग शुरू साहार करने में। उनक साधारण व्यवहार शुरू रहते थे। उमक नियम मुनिमा का साहार देन में उन्हें कोई अनुविधा नहीं होनी थी। उनके गुण भावा ता दिये गये शुरू साहार से मुनिमा के रोग दूर हा जात थे और उनक धर्म का पानन मुदर रूप में होता रहता था। उम मुनिमा के साहित्य में प्राय दूषण नहा लगता था। और दूसरी सात साहार देन आवक धर्म कभी का निजरा कर लेता था। अत्रता के क्षण ता मुनि साहार नहीं ले सक्ता। जिनकी रात्रि भाजन का त्याग हा अष्टमूल गुणधारी हा जो पानी धानकर पाना

उत्तम त्याग धर्म

धनार्थि बाल से यह जाव रथ का भूष कर पर द्रव्य को धरना मानकर उम ग्रहण करता थाया है । हमसे उम रथ स्वल्प का ज्ञान नहीं हुआ । जब किसी सयाग से गुण का उपर्य मित जाता है या त्रिनवाणी सुनने का मिल जाती है तब उत रथ का ज्ञान हाया है । रथ का ज्ञान होने पर हमे पर म बदलि हा जाला है धीर तब यह पर का त्याग करने की धीर उत्साहित होता है । म पर क ग्रहण से धान तब कभी मुन नहा मिला, हमारा दु स हा दु म मिलना थाया है । जब सुशायक वगु का त्याग कर दिया जाता है तब सुख शान्ति मिलना है । जब पेट में कज हा जाया है तां थराबा का दूर करने क लिए एतिमा या जूलाब लते है । गदगा पेट म बनी रहे साफ न को जाय तो रोग पैग हा जाते हैं । यदि किसी स्थान पर गन्गा पडी हां ता उस महार से साप करा दते है । यदि साफ न कराया जाय ता यह गदगी धीर सड जाता है । उसम दुर्गाय पतती है राग पतते हैं । इसी प्रकार धारमा मे राग, द्वेष-वपाय धानि का जा मन इतदा होगया है उसके कारण जीव को कभी सुख नहा मिला, कभी शान्ति नहीं मिली । इसलिए सुख शान्ति प्राप्त करना है ता कमल को दूर करना ही हाया ।

जिस मनुष्य की शक्ति एक मन बाभा उठाने की है उसके ऊपर दो मन बाभा रल दिया जाय तो उसे बहुत वेना होनी है । उत समय उससे भगवान का नाम लेन या दान देन या पूजा करने को कहा जाय ता यह नहीं कर सकता । क्योंकि वह तो बाभ के मारे मरा जा रहा है । इसी प्रकार आत्मा कपाया विषया मिथ्यात्व धानि का मोह लिये फिर रहा है । उस मोह के कारण उसे अपार दुख हो रहा है । उस समय उससे कहा जाय—भाई ! धम बिया करो । ता यह धम की बात नहीं सुनेगा । वह जवाब देगा—मुझे पुसत नहीं है । मे तो मरा जा रहा ह तुम्हें धम की सूची है ।

कोई व्यक्ति भूल से ध्याकुल है। उस समय उसे कोई उपदेश दा तो उम बह खिचकर नहीं लगता। इसी प्रकार इस जीव के तृष्णा का तुपा बढ़ी हुई है। ऐसी अवस्था में इसे त्याग का उपदेश नहीं भास सकता।

यह जब कभी अगुम प्रवृत्ति करता है कभी गुम प्रवृत्ति करता है। दाना हा इसके लिए भार बना हुआ है। जब अगुम में प्रवृत्त होता है तो इसके परिणाम में रौंता रहती है। किन्तु जब गुम प्रवृत्ति करता है तो पुण्य मलय कर लेता है। उस पुण्य मलय का उदय होने पर इस अच्युती गति अच्युत कुल धन रूप बभय सब मिलता है। किन्तु यह उस बभय का रूप का कुल का पानर उम पर अभिमान करने लगता है, ऐश्वर्य में इतराने लगता है। आपा भूत जाता है और पाप के माग में पड जाता है। इस प्रकार यह जीव गुम और अगुम दोनों का ही बोझ उठाये फिरता है। इस बोझ के कारण इस नाना प्रकार की ध्याकुलतायें रहती हैं नाना प्रकार के दुःख उठाने पडते हैं। यह बोझ उतारे तो इसे राहन मिले। इन गुम अगुम का त्याग किये बिना इसे शाश्वत सुख कभी नहीं मिल सकता।

त्याग दो प्रकार का होता है—एकदेग त्याग और सबदेग त्याग। एकदेग त्याग गृहस्थों के होता है और सबदेग त्याग साधुओं के होता है।

पहले जमाने में गृहस्थ लोग गुद आहार करते थे। उनके आचार व्यवहार गुद रहते थे। इसलिये मुनियों को आहार देने में उन्हें कोई असुविधा नहा होती थी। उनके गुद भावा से दिये गये गुद आहार से मुनियों के राग दूर हा जाते थे और उनके धम का पालन सुन्दर रूप में होता रहता था। तब मुनियों के चारित्र्य में प्रायः दूषण नहीं लगता था। और दूसरी ओर आहार देकर श्रावक अपने कर्मों की निजरा कर लेता था। अन्न की के हाथ से मुनि आहार नहीं ले सकता। जिनकी रात्रि भोजन का त्याग हा अष्टमूल गुणधारी हा जो पानी छानकर पीता

हा तथा नित्य दय दान करता हो और गुद आहार करता हो ऐसे व्यक्ति के शय से मुनि आहार सन हैं। तभी उनका मुनिधम पल पाता है और तभी थावर अपने कतव्य का पालन करके धम की गाडी को चलाना है।

एस थायक गृन्थय सोम का त्याग करन का प्रयत्न करत है। साधारणन किसी व्यक्ति से दम चास ग्याया देने को कहा जाय तो नहीं देता। किन्तु उससे यह कहा जाय कि तुम्हें पुण्य लगेगा तो वह दे दता है। पुण्य तो बीज व समान है। जम किसान जब बीज बोने जाता है तो धोनी म बाधनर ने जाना है। किन्तु जब काट कर लाता है ता उगे अनाज को तान व लिये गाडी ल जानी पडती है। इसी प्रकार पुण्योत्पय मे जब मनुष्य जम उत्तम कुन उत्तम धम मिला और उस धम का आचरण किया भगवान की पूजा की दान पुण्य किया तो यह अपन कर्मों की निजरा भी करता है और महान पुण्य का बंध भी करता है जिससे उसे अगन जम म पुन महान वैभव की प्राप्ति होती है। किन्तु दूसरा पुण्य ऊमर जमीन म बाध हुए अन्न की तरह होता है। जब धम की आराधना करते हुए निगान करत हं, भागा की आशाया करते हैं तो उत्तम अगुम कम का बाध कर लते है।

आचाय उपल्पा दे रहे हैं—भव्य प्राणिया। हम सब श्रीमन्त हैं। हमारे पास रत्नत्रय का खजाना है। अन्नत चतुष्टय हमारे पास है। हम दरिद्री नहीं हैं। यदि त्याग किया जाय तो हमे क्या नही मिल सकता। एक अन्तमुहूत भर म हमे केवलमान मिल सकता है। इन रत्नत्रय पर धूल पड गई है। हमारे खजाने की हमने बटुन समय से सार सभाल नहीं की। इसलिये इसमे कचरा भर गया है। उस धूल को उग कचरे का निजाल बाहर करा। उसका त्याग कर दो। तुम भूल से उस कचरे को अपना खजाना समझ बैठे हो इन नासमभी को छोडकर अपने वास्तविक खजाने की सार सभाल करो। तुम्हें खजाना अवश्य मिलगा।

षण्ण म एक साधु रहते थे । राजा उधर से निकला ।
 उर उमे त्या घाई—बबारे के पाग माने पहनने को कुछ
 (उसने १००) नीकर के हाथ भेज । साधु बोले—
 त्र को देना । नीकर लौट गया । उमन राजा से जाकर
 ने सोचा—कम है और भजना चाहिये । उसने (१०००)
 पु ने फिर लौट लिये । इस प्रकार राजा बार-बार रकम
 ना रहा और साधु ने लौटते रह । तब राजा स्वयं दो लख
 र भाया । किन्तु साधु बोले—य दाय गरीबों का देने । गुरु
 हत नहीं है । म ता श्रीमन्त ह । राजा को बग्य भारवय दूया ।
 जन पूजा—घाय अपना मान कहाँ रखन हैं । साधु बोले—यही पर ।
 राजा ने समझा—यही आमपाम इहानि कही गाह रकमा हागा । राजा
 वहा रह गया और बराबर दबला रहा कि साधु अपना मान कहाँ
 रखने हैं । जब कुछ पता न चना तो वह साधु से बोला—महाराज ।
 मेरे अज्ञान में धन की कमी आ गई है । आप कुछ दे नीजिय । सा
 बोले—राजन् ! पहन त्याग करो तब मिलगा । राजा ने साधु
 कहन से राजसात् त्याग दिया और मुनि बन गया । कुछ दिन गुरु
 पास रहकर अभ्यास किया । तब एक दिन गुरु बोले—
 चाहिये धान । मुनि बान—गुरुदेव । आपने मुझे बड़े भाई
 की चाबी सोंप दी है । मैं भी प्रयत्न करके आपके समान
 जाऊंगा । अब तक मेरे पास रातपात धन बभव सब
 मैं नरित्री था । आपने वह सब छुड़ा दिया । मेरे
 दोस्त नहीं रही किन्तु मैं अब यामन्त बन
 सम्यग्धन सम्यग्मान और सम्यक् चारित्र
 दारिद्र्य को दूर कर दिया ।

वस्तुतः त्याग से धन मिलता है । जोक ही छोड़ा ही
 त्याग से वह संचित होता है । जब महारथी
 मझमा पीछे-पीछे चली । उन्होंने उस

नहीं हुई। जब नेवलजा हुआ तो वह समनगरण बनकर विभिन्न
 रूपों में आगई। तब भगवान ने उसका स्मरण नहीं किया। वे प्राप्त
 संसार धनुष ऊपर विराजमान हुए। जब वे घबरेते तो वह वसंत
 बनकर आवाही परा में लाटती फिरती। विन्दु भगवान ने उसके
 ऊपर अभी पर स्मरण नहीं किया।

साथ समभत है तदभी कमाने न आता है या भाग ही बढ़ती है।
 उनकी यह नासमभा है। एक नगर में एक धर्मात्मा सठ रहते थे।
 उसका नाम पुत्र था। सभी भुगीन और सदाचारी। एक दिन रात में
 सेठ का पास लम्बा धाँ। सठ बाने—मई! तू क्यों है और यहाँ
 क्या आई है? तदभी बानी—म लम्बी हूँ। जब मैं आपन यहाँ से
 जाना चाहती हूँ। मैं सात दिन धाँगी और सेवा करूँगा, फिर चली
 जाऊँगा। सेठ बाने—ठीक है। सठ ने यह सावकर सन्तोष धारण कर
 लिया कि मेरे पुत्र कम का उष्य जब तब या सब तब लम्बी मेरे पास
 रही। जब पुत्र मन समाप्त होकर भुभुभ कम का उष्य आयगा तो
 लम्बी चली जायगा। इसमें गात्र या चिन्ता करने का कौन सी बात है।
 उसका अपन परिवार का बुनाया और सारी घटना समभा कर बाता—
 सब लम्बी तो जान बाना है। सठ अपन पास जो धन है उसे सप्त
 शेरों में सात दिन में लगा रना है।

बहु प्रतिनिधि दान करना ही या विन्दु धन तो उसने अपने धन की
 शून्य हारी न धन धर्मात्मा धानि न सगाना धारम्भ कर दिया क्योंकि
 वह समझ गया था कि मान दिन न धान मेरे पास धन नहीं रहने बाना
 है। मान दिन धान तदभी फिर आई और सेठ के सामने हाथ जोड़कर
 लकी हो गई। सठ बोना—तो धन तुम आरही हा। लम्बी बड़े संतोष
 का साथ बानी—मैं बने जा सक्ती हूँ आपने तो मुझे साँप लिया है।
 दान कर आपने मुझे हमगा के लिए अपनी दामी बना लिया है।

जो दान दो हैं दयाग मछो हैं उन्हें मिलता है। जो भोग करते
 हैं विन्दु धन नहीं करत, बाना धन होना रहता है। लोग दान तो

बस्ते पत्नी धीरे भगवान के पास जाकर माँगते हैं । किन्तु माँगते में कहीं
मिन्नता है । धीरे माँगते भा क्या है—बचता ।

वह भगवान के सामने जाकर बटुता है—भगवन् ! मैं तेरे निय
परकार छोड़कर आया हूँ धीरे साथ में बाबा बच्चे हैं । वह उनके सामने
बड़े तार-जोर ध पड़ता है—जाधू नहीं मुरदाग पुनि नरराज परित्त
गाय जी । मैं जाकर हूँ तुव भक्ति भव भव शीत्रिय गिवनाय जी । धीरे
म पड़ने के सुरन्त बाबा ही बटुता है—भगवन् ! मुझे लडकी का ब्याह
करमा है । धरया पास नहीं है । तुम्हीं बडा पार सगा दा । मैं तुम्हारे
ऊपर श्री का छत्र चडाऊँगा । भगवान उमकी बातें गुन-गुन कर
गायन हुमत हूँगे । यदि मंत्रि में बडे भगवान बाव मक्ते तो गायन
यह पूछन-तू मुझसे ता माँगता है पहल यह बता तूने मुझे क्या दिया है ।
तू बुद्ध न के मके ता इतना तो दे कि धरने इन्धिय विषया को कुछ कम
कर दे ।

जीवन में जिसके स्वाग का सम्पास है वह मरते समय सब कुछ
शान्ति में छोड़ सकता है । किन्तु जिन्हें स्वाग का सम्पास नहीं है वे
छोड़ते नहीं उन्हें छोड़ना पड़ता है । एक सठ था । बडा बज्रस । कभा
दना तो जानता ही नहीं था । उसका एक पाइकी था । कभा बु दायी
थी । स एक बार बीमार पड गया । मग्गासप्र अवस्था थी । प्राण
निगल रहे थे । कान में एक झारू रखी थी । वहीं बछड़ा बधा हुआ
था । वह झारू खदान लगा । सठ का गमा बर हू गया था, बोल नहीं
सकता था । उएन दया बडवा झारू मार जा रहा है । उसने अंगनी
से इगारा किया । लडकी ने समझा—विता जो मरते समय मुझे इगारा
कर रहे हैं कि यहाँ बन-बड़ा है । संयोग की बात कि सेर धीरे धीरे
उस बीमारी से डीक हो गया । सब एक दिन लडकी ने पूछा—पिता
जी !

शान्ति से गडे हुए धन की धीरे

ना ? सोठ बाला—पगली, वह तो मैं बछड़े का घोर हंगारा कर रहा था । वह भागू भाग जा रहा था ।

इस प्रकार जिन्हें त्याग का जीवन में अभ्यास नहीं है, व मरते समय मोह नहीं छोड़ पाते । और बड़े सकलपट्ट परिणामों से मरते हैं । उनके मन में धन और अपने जन की वासना बनी रहती है । किन्तु जिन्हें त्याग का अभ्यास होता है, व मरते समय तनिक भी पबडते नहीं । उनके परिणाम निमल रहते हैं । उस समय उनका प्राणु बंध होता है तो शुभ गति का ही होता है । उनके राग-शोक सब नष्ट हो जाते हैं ।

दक्षिण में एक घमतिमा थावक था । वह एक दिन पूजा करने का द्रव्य लेकर जा रहा था । रास्त में एक बगीचा पडता था । जय उसके सामने से वह निरन्तर तो एक साप ने निकल कर घुटन पर उसे बाट साया । उसने समझ लिया कि भव भृत्यु निश्चित है । वहा में पांच मील पर साचाय पायनागर जा महाराज ठहरें हुए थ । वह दौडा दौडा महाराज के पास पहुचा । और बोला—महाराज ! मुझे मरना है । जल्दी मस्कार करा । उसने तत्काल शुभ्र दाशा लली । महाराज बीजादार मंत्र पढ़ते रहे । धीरे धीरे उसका जहर उतर गया और ठीक हो गया । अभी दो माल पल्ल उनरी सृत्यु हो गई । उनका नाम सुबल महाराज था ।

य दश घम भगवान के वचन है । यदि भगवान का घम हमारे हृदय में रहेगा तो हमारा क्याण हो जायगा । पव के निमित्त से शुभ लोग शुद्ध आहार-जल ले रहे हो । यदि तुम्हारे घर पर इसी प्रकार नित्य शुद्ध आहार बनता रहे तो कितना लाभ हो । तुम्हारे सार रोग नष्ट हो जाय और अनायास ही तुम्हें पुण्य बंध हो । तुम्हारा वह शुद्ध आहार जल जब साधु के पेट में जायगा तो उससे उनका भी चारित्र निमल बनेगा । जब साधु की भावना को नष्ट करने वाला अन्न मिमता है तो

सौहृष्यमभयादाहुराहाराद भोगवान् भवेत् ।
 प्रारोग्यमौषधाज्ज्ञेय श्रुतात्स्याच्छ्रुतकेवली ॥

अर्थान् अभयदान से मुन्दर रूप मिलता है । आहारदान से भोग मिलते हैं । औषधिदान से प्रारोग्य प्राप्त होता है । और शास्त्रदान से श्रुतकेवली होता है ।

शास्त्रों में कहा है—“क्तित्तरत्याग तपसा । अर्थान् त्याग और तपस्या अपनी शक्ति के अनुसार करना चाहिये । इन कामों में अपनी शक्ति छिपानी नहीं चाहिये । और न अपनी शक्ति से अधिक करना चाहिए । जिन्होंने शक्ति के अनुसार त्याग और तपस्या की है उनका सक्षर में यग पला और उनका कल्याण भी हुआ ।

सबसे प्रथम है अभयदान । हमारे समक्ष कोई किमी को मताता है । मारता है पीड़ा देता है तो हम हर समय उपाय से बरणा बुद्धि से उसकी रक्षा करनी चाहिए ।

विष्य पवत की गुफामें ३ एक सिंह और एक सूकर रहते थे । एक दिन दो मुनिराज इहीं गुफामें से एक गुफा में ठहरे । उन्हें देखत ही सूकर को जाति स्मरण जान हा गया । उसने मुनियों के उपदेश से कुछ व्रत ग्रहण कर लिए । उधर मनुष्यों की गध पाकर सिंह वहाँ आया और मुनियों को देखकर यह उन्हें खाने के लिए भपटा । सूकर देख रहा था । वह द्वार रोककर खडा हा गया । दोनों में युद्ध होने लगा । एक मुनिया की रक्षा की भावना से लड रहा था और दूसरा मुनियों की भक्षण के लिए लड रहा था । दोनों लडते लडते मर गये । सूकर तो अभयदान की शुभ भावना के कारण सौषम स्वर्ग में जाकर देव बना और ऋद्धिया का धारक हुआ । तथा सिंह का जीव अपने क्रूर परिणामों के कारण नरक में गया । कहा भी है—भावना भव नाशिना । भावना से भव का नाश हो जाता है । तब अभयदान की

भावना के द्वारा म सुधर स्वयं से दब जाता तो इसमें क्या घातकत्व की बात है ।

अन्यथायुक्त व राजा कीदोष बड़े पापित्त पुरुष व । एक दिन मुनिराज घातकत्व की घोर घण्टी की देण के यहाँ घातक के लिए पधारे । राजा ने बड़ी भक्ति और श्रद्धा से उन्हें घातकत्व दिया । इस मुनिराज को म देवों के ताराज यज्ञों की घोर मुग्धित्त पुण्यों की बर्षा की । यही श्रापेण घोर कारण भावनाओं के द्वारा तापदूर प्रकृति का बंध बन्ध मोनहरे नीचदूर गात्रिणाय हुग । भगवान गाम्भिराय तापदूर व कामदेव व घोर बन्धवर्षा व । घातकत्वान की तेजी मन्त्रिमा है ।

घण्टी की मारायण वृष्ण मोन भक्त व घण्टीयि से । डारवा उनका राजधानी थी । एक बार उन्हे मारा—मारा के बाहर एक घण्टी पधारे हुए है । किन्तु उन्हें कोई भयानक रोग हो गया है । श्रीकृष्ण ने दत्ता कि मुनिराज घातकत्व की हैं । राग म उनको वेना ता बहुत है किन्तु व घण्टे समय म उम वेना से जग मी बिचलित नहीं है । कृष्ण को उनका रोग मगर बड़ा दुःख हुआ । व मोषने सगे कि मुनिराज का रोग किस प्रकार ठीक हो । उन्ही घण्टे रातबध को बुलाकर पूछा । वद बताया—महाराज । राग तो ठीक ही जायगा । किन्तु दवा लडू में देनी पड़ेगी तथा जब तक रोग ठीक न हो तक तक घोर विसा प्रकार का भक्षण नहीं कर सकेगे । कृष्ण ने उस दवा के कुछ लडू बनवाय और मगर भट म बनवा दिए । तथा यह भा भुषना दे दी कि मुनिराज जब घातक के लिए भावें ता उन्हें केवल व ही लडू घातक के लिए जाय । मरा तक कि स्वयं भा ये हा लडू खाये । डारवा में इस प्रकार का घातक दिन वा पव घण्टीयि कर लिया जिसमें बन्ध लडू हा खाय जात है । मुनिराज म जहाँ भी घातक लिया के लडू ही घातक के मिले और घातक दिन म ही उनका रोग शान्त हो गया । उनका रोग

जैसे जस गान्ध हाता जाता था, वृष्ण को मन में यही वस हा हा
बढ़ता जाता है। वे निरन्तर पाठन कारण भावना भात रहत थ।
फन्त उस प्रीपयान के निमित्त से उह तीपदुर प्रवृत्ति का बंध
हा गया।

शास्त्रदान के प्रभाव स एत स्वात कुत्कुत्त धाषाय धन गया।
गायित नामन स्वात पधनन्ता मुनि को एक जगन में वृस की कोत्र
में मिले एक प्रथ को भेंट करन क फन स्वक्य प्राग धनवर धतकवनी
दुषा।

दान की महिमा अधित्य है। दाा त्याग का मूलरूप है। दान देने
का धय द्रव्य का देना नहीं है। द्रव्य तो दुनिया में सभी देत हैं। विन्दु
दिए हुए द्रव्य से मोह का त्याग करना सही धय में दान कहलाता है।
सकिन कुछ लोग द्रव्य दान करत हैं किन्तु द्रव्य से उनका मोह नश
हूट पाता। व द्रव्य देकर उसमें धपना नाम चाहा है यग चाहते हैं।
यह त्याग नहीं कहना सकता। वह मा पुष्य का व्यापार है। व्यापार
में जिम प्रकार कम धन लकर अधिन मात प्राप्त है उमी प्रकार पुष्य
क इस व्यापार में भावना रहनी है। कम जाना यह है टि धन का
लोभ कम दुषा किन्तु यग का लाभ बड गया। लाभ तो रहा हा। लोभ
का धनग धनग जाति नहीं हाती। उसरा बाहरी रूप धनग हो सकता
है। लेकिन लोभ तो उन भिन्न भिन्न रूपों में लर ही है। उसमें धन्तर
रन्ता है कबन तारतम्य का।

बुद्धिमान धीर मूख दोनों में क्या धन्तर है? बुद्धिमान समय का
पहुचानता है धीर उसमें लाभ उठाता है। मूख समय को
पहुचान नहीं पाता। इसलिये यह उससे लाभ नहीं उठा पाता। ससार
में जाकिन धवस्था में राजा रक धनिक तिधन में भे रहते हैं। किन्तु मरने
पर कोई धन्तर नहीं रहता। मरने के बाद कोई राजा धपना राय
धमव स्वजाना ने गया हो तेसा कभी सुना नहीं। जीवन में धन का

नृपणा करने कुम्भ साग धन को बढ़ा खेत है धन्य नहीं बरा पाते । विष्णु
 मरन पर द्वाइना सबका पहता है । पृथ्वी वास्तव से साम्प्रदाय है
 धनान् मुख समान हैं । कुटिगानी यह है कि जा छोड़ना परेगा, उसे
 पढ़ने हा छाह दिया जाय । यदि सम्पूर्ण आरम्भ-परिग्रह को छोड़ मुझे
 ना सुवशेषु माय है । यदि मरत्यागा न बन मुझे तो अपने स्वयं से
 बराबर देने रहना थाणि । हमने समार गता म जो परिग्रह का मुखर
 करक पाप किया है उसका प्रायश्चित्त दान द्वारा होता है । धन गत
 तो परिग्रह का प्रायश्चित्त है । और यह अपने धीर दूमरे के कर्मगत
 के उद्देश्य से किया जाता है । धनुषहाथ भव्यानिमयो गत धर्म
 अपने धीर पर क धनुषह क निग अपना वस्तु का स्थान गत करण
 है । जिम द्रव्य के त्याग से स्वयं पर क भव्यानिमो की कर्मगत है, इत गत
 बना जा सकता है ।

यह श्रावणों का एवम त्याग है । साधु ना मरणात् कर्म है ।
 व सभी आरम्भ परिग्रह के त्यागी होते हैं । वे स्वयं से कर्मगत की
 कामना करत हुए मता कदल्यानिम करत रहत है । स्वयं दान का
 लायक क्या है ? वास्तव पण्य ना कुछ भा मता है । विष्णु उक्त गत
 जा धान्निग धन है—रत्नवय है उमे से दुर्गा क उक्त का पुत्र
 है । व चाहते हैं कि यह धर्मगत गतवा हू इत गत कर्मगत
 म मामने म व महागता है । धीर धरतल-कर्मगत म मरणात् से उक्त
 से बडे दाना है जा जयन क जावा का क उक्त का उक्त मता है ।
 सबसे बडे दाना इसलिए है क्योंकि व मरणात् क उक्त है । उक्त म
 धान्ना क कम मन का भा त्याग कर्मगत है ।

समार मे त्यागा ही महान हाता है इत गत है । व मरणात्
 का निरन्तर धर्मगत करत रहता कर्मगत

उत्तम आकिचन्य धर्म

आकिचन्य का अर्थ है कि मैं आकिचन हूँ मरने पर पण्य से कोई सम्बन्ध नहीं है। पर पण्य मरने नहीं है। आज तक प्राणी पर की अज्ञानता मानता आया है किन्तु पर पण्य बाह्य परिग्रह हो या आन्तरिक गह होना ही हमारे नहीं है अज्ञानता हमारे लिए उपाधि है। बाह्य परिग्रह में जो हमारा मोट आन्तरिक परिग्रह है वही वास्तव में परिग्रह है। पण्य परिग्रह नहीं है। पण्य की ममता परिग्रह है। जब तक राग परिग्रह है तब तक परिग्रह में रहने नहीं कहा जा सकता। किसी व्यक्ति के पास यदि कोई परिग्रह नहीं है किन्तु उसके मन में उसकी आनायास है तो वास्तव में वह परिग्रह है। दूसरी बात समाज के सम्पूर्ण अर्थ और अर्थ ही और उसमें आसक्ति न हो तो वह अपरिग्रही है। आत्मा में भिन्न जितनी भी अज्ञान है जब तक मन में उसके प्रति अज्ञानत्व है तब तक वह उनके सम्बन्ध में यकी सोचना है कि मैं इस काम में छोड़ूँ। वह उस पर की अपने लिए इतना अभिप्राय बना जाता है कि उसे वह पर भी अपना स्वरूप मान्यता पटता है। स्थिति तो यही तक हो गई है कि यह शरीर और शरीर में सम्बन्धित अर्थ ही इन सबको ही वह आत्मा समझ बैठा है। इनमें होने वाले सुख दुःख को अपना सुख दुःख मानता है। जिनमें हमें सुख दुःख मिल सकता है उन्हें अपना मानता है और जिनके कारण शारीरिक वृष्टि मिलता है उन्हें पर मानता है। इस स्व पर की कल्पना में आत्मा का और उन्मुक्तता समाप्त हो गई है और आत्मा और उसके गुणों का स्व मानने के प्रति अज्ञानता ही गया है। इससे पर के सुख का प्रयत्न करता है लेकिन आत्म सुख की ओर ध्यान नहीं आता।

साधु बनकर निरमग हो जाते हैं किन्तु यदि परिग्रह छोड़ने के बाद भी उसमें आसक्ति बना रहे तो वह साधु बनने के लायक नहीं है। आत्म

कायों में उत्तम कर हम भूत जात है और हमारा यह भावना बन जाना है कि मुझे मरने के लिए यहीं पर रखा है और मेरे बीबा बच्चे जमीन जायगा यह सब भी मेरे साथ रहे ।

सितार बागाह ने घारा दुनिया कह कर ला थी । सतार में उसके पाम घन दौनव की कमी नहीं था । लेकिन जब उसकी घट्टु होने लगी तो उसने अपने मरने को बुलाया और उसमें कहा—मैं सतार छानकर जा रहा हूँ । मैं लावा औरला के साथ का मन्दूर पौधे डाला, लावा लोगो को परिवारहीन बना दिया मैं जानि मन बितनी हत्याओं की । यह सब मने इसलिए किया था कि यह राजपाठ घन दौलत सब मेरे साथ जायगा । लेकिन आज मरत समय मुझे यह भ्रहसास हो रहा है कि मेरे साथ इनमें से कुछ भा जाने वाला नहीं है, यहा तक कि यह गरीर भी यहा रह जायेगा । मैंने त्रिन्गी भर जा भूल की मैं यह चाहता हूँ कि दुनिया इस भूत को न दुहराय । जब मरी अर्थी निरल तो मारी पलटन और सारा यजाना मरे साथ रह और मर कपन से मरे दोनो हाथ बाहर निकाने तना जिसस लोग समझ सकें कि जब सितार पना हथा था तो मुट्टा बाधकर भाया था और जाते समय गता हाथ माली है । उसके साथ कुत्र भी नहीं जा रहा है । जो कुछ जा रहा है वह उसी ऐमात है ।

यह एक नभन सत्य है जो सितार ने दुनिया को मसीहसत दन के लिए बताया था । लेकिन यह ऐसा सत्य है जिसे बच्चा बच्चा जानता है लेकिन कोई भा उस पर अमन नहीं करता अर्थात् मानता नहीं है । पात और मायता में यही अंतर है । बहुत बड़ा विद्वान और ज्ञानवान होकर भी इसकी मायता प्राम मिथ्या रहती है । उन गारुषों में इसी मिथ्या मायता का मिथ्यादान कहा है और जब तक यह मिथ्यादान है तब तक इस जीव का कल्याण नहीं हो सकता ।

एक बार राधा भात रात्रि का घाने पर्वण पर जगत् का
 राजा के विषय में विचार कर रहे थे और विचार करते-करते इतने
 मग्न हो गए कि उनका ध्यान भंग हुआ और वे सोने लगे।
 एक बार धारी करने के उद्देश्य से वही भुग घोषा मंत्रिण
 कि राधा महाराज जाग हुए हैं इसलिए वह महाराज के पास
 नीला में उनके पर्वण के नीचे जा दिया। राधा को देकर
 तीन बारण तो बना नियम लखिन पीया बारण नहीं इन
 उन्हीं नाम बारणों को बार बार पुहरा गी थे। इ बारण
 थे —

चेतोहरा युवतय मुहुबोऽनुभूता मदबांधवा प्रसन्न
 गभगिरदच भूत्या । गजति दन्निनिवृत्तनरदा
 स्तुरङ्गा

बार समझ गया कि महाराज से क्या बात है नहीं या राजा
 है। वह भी संग्रह का घरा घण्टा दिखने का। यह भी राजा
 गया और उमने पीध बारण का पुनि इव इव इव —

सम्मेलने तयनयानहि विष्टिचरन्ति ॥

राजा को यह है कि पर नवीन राजा के राजे राजे राजे
 मित्रों हैं। मित मर अनुभूत है का इतने राजे राजे राजे राजे
 और मने मोहर मरा घोषा में बारणों (१) को इतने बारणों
 दात बाव हाथी गजना करत रहे हैं और बारणों (२) को इतने
 बारणों (३) को इतने बारणों (४) को इतने बारणों (५) को
 बारणों (६) को इतने बारणों (७) को इतने बारणों (८) को
 बारणों (९) को इतने बारणों (१०) को इतने बारणों (११) को
 बारणों (१२) को इतने बारणों (१३) को इतने बारणों (१४) को
 बारणों (१५) को इतने बारणों (१६) को इतने बारणों (१७) को
 बारणों (१८) को इतने बारणों (१९) को इतने बारणों (२०) को

जिनके महलों में हजारों राजे के पानूस थे,
 शाह उनकी कस पर प्रबल न ही कुछ भी नहीं

जो प्रायः ही उस एक दिन जाता है और सालों हाथ हा जाता है। मनुष्य अपने घन रूप यौवन आदि पर इतना इतराने लगता है कि वह दूसरों को कुछ नहीं समझता है लेकिन वह भूल जाता है कि उसी जन्मो केवन राव दिन ही है। मन्वाह मे केवल सात दिन हस है। एक दिन उसना पना हान मे निवृत्त जाता है और एक दिन मरते म। इन पाच जिनो की जिनगी मे क्या इतराना और क्या घमण्ड करना। लजिन इतराने वाला की दगा उस गधे जसी है जा गरमी मे बर कर रहता है और समझना है कि मने इतना मदान चर निम। दो व्यक्ति ने एक नगी पार की। एक के सिर पर रई की गठरी थी और दूसरे के सिर पर नमक की गठरी थी। रई की गठरी वाला समझना था कि म बहुत मालदार हूँ और नमक की गठरी वाले को बड़ तुच्छ समझता था। जब वे बीच धारा मे थे तभी जोर की वारिण होन लगी। दोनों गडगे भीग गई। अब रई भाग कर भारी हो गई उससे चला नहीं जाना उसमे इतना बाक हो गया कि वह अपने गरीर के भार हो नहीं सभान सका और गिर गया। वह उस गठरी के बोझ के कारण फिर उठ भी नहीं सका। लेकिन नमक की गठरी हनकी होती गई और उस व्यक्ति ने सामाती से नदी पार कर ली। महा दशा सारे सासारिक जीवा की हामी है। जिनके पास अधिक धन और परिग्रह है वे निधन व्यक्ति को बडा घृणा की दृष्टि स देखते हैं और अपने भाव को महान समझते है लेकिन उनका दशा माला रई की तरह है। वह हम ससार सागर को कभी पार नहीं कर सकते। धौ के ऊपर खूब जेवर लाज दिया जाये। लोग समझते है कि धौ कितना मुन्दर है किन्तु धाडा समझता है कि यह सब मरे ऊपर भार है। सठाना जेवर पहन कर मन्दिर जाती है लेकिन वह स्वतन्त्र नहीं है। उन जेवरों की रणा के त्रिण दो नौकर दग्ग जेवर चलते है। वह मन्दिर मे भी भगवान के दगा नही कर पाती उसे अपने जेवरी का ही ध्यान रहता है। वास्तव मे लाग परिग्रह क पीछे पागल हो रहे है।

रहना । जंगल है यहाँ बड़ा डर है । गोरख ने गुरु का जान ही उनका
 घना गटोला । उसमें सान की दाईं टें दिखाड पड गई । गोरख उन्हें
 देखकर मन ही बड़बड़ाया— डर ता ! यह है गुरु का डर । खला म इस
 डर को ही दूर कर हू । उसने चुपचाप बई ट कुग म पटकदी और घाँ
 से पत्थर लकर धल में रख लिये । फिर गुरु का भाने पर दाना वहाँ से
 चल दिमै । रात हुई तो गुरु बाल—गोरख ! यहा डर तो नहीं ? गोरख
 नाथ मुस्कराकर बाल—गुरुजी ! डर काह का । डर ता म पाछे ही कौं
 प्राणा साधु को डर किमका ?

जब तक पर वस्तु के प्रति मोह भावना रहती है तब तक डर
 रहता है । जब पर क प्रति भास क हट जाती है और शल्य रहित हो
 जाता है तब वह निभय हो जाता है और बनी बन जाता है । जब
 तब शल्य रहेगा तब तब वह सम्मर्दृष्टि नदी हो सनता सम्मग्नानी
 नहीं कतना सनता । पहन थावक लाग परिग्रह परिमाण करते थ । आज
 तो बच्चा का भी परिमाण नहीं । पाप क उन्म से भोग की नानसा
 बढ़ती जा रही है और बच्च अधिक् पना होते जा रहे है । पहने श्रावक
 मांग भाग का साधन करन के लिये त्याग करते थ किन्तु आज तो धाय
 तक कम नहीं कर सकते । पान लोभ अस्तिचन भावना भाने रहते थ ।
 किन्तु आज तो सभा लक्षपति करोडपति बनने का दिन रात प्रयत्न
 करते रहते है । आज सट्टा ग्राम हा गया है—रुड का सट्टा चाने साने का
 सट्टा, पानी का सट्टा मटर चन का सट्टा दडा और न जान कपा-क्या
 सट्ट । किन्तु धाग भून गया है कि कबल पुरुषाय से ही धन नहीं मिलता
 उसके लिय कुड और भी चाहिये । पूव कृत सुकृत-पुण्य का उन्म हुए
 बिना सारा पुष्याय ऊसर भूमि पर पडी हुई वर्षा की तरह निष्कन
 होता है । पुष्य का जिनना पानी हम लाए ह, उतना खीच कर निकाल
 कर पी सकते हैं । पानी ही नहीं हागा तो विषेये कहीं से ?

पहन जन राग बहुत सम्पन्न हात थे । क्याकि वे धन करत थ । अर्चा पूजा दान परापकार करत थ । न्यायपूषक धन कमात थ । जा पसा बचता था उमे मंदिर निर्माण खाति मे लगाने थे । जनो की प्रामाणिकता की सझार पर सब छाप थी । स्वजान क सजाधी अधिवतर जन हा बनाय जाते थे । जनो में कोई जैन नहीं मिलता था । लागों पर उनके चारित्र्य का प्रभाव था । वे निव्यसनी रहने थे । कमा कराब नहीं पीते थ । माम भक्षण का तो प्रान ही नहीं था ।

किन्तु आज साधु की सगति नहीं । सोसायती अच्छा नहीं रही । धन मे रुचि नहीं । आज सा नीवत यहाँ तक आ पहुँची है कि जन नाम धारी करावी भी मिल जायेंगे सोसायटी मे पहुँच कर अण्डा म भी बटुना को परहेज नहीं जना में भी अनेक जैनी मिल जायेंगे । क्या यह हम लागों के लिए गावनीय स्थिति नया है । त्याग और आकिचय धन के मानने वाले यति अरु मार्केट तस्कर व्यापार या मिलावट के मानन म गिरफ्तार हा ता असम अधिक दुख की क्या बात हो सकती है । जनधम और जन मस्कृति का सझार म कोई आघात नहीं पहुँचा सकता । यति आघात लगा है ता स्वय जना द्वारा । जैना का आचरण मायताये आज जनधम क अनुकूल नहा रही । आज के युवक नेब अर्नन पानी छान कर पीने रात्रि भोजन त्याग खाति धार्मिक आचार विचारों का उपहास उठाने म मचाष नहीं करते । वहाँ है उनम जन मस्कृति का उदात्त महान भावना । पहले जन की पहचान उनक आचरण म होती था और आज नाम क साथ लग जन नाम मे हाता है । बन्धन से सा अपने नाम क आग जन नाम लगाने म भी लज्जा अनुभव करत हैं ।

यह एक पहलू है आज की स्थिति और हमारी भावना का । किन्तु इसका उज्वल पहलू भी है । आज भी अनुपात की दृष्टि म मंदिरों क नित्य दहन करन वाला मे जन अग्रणी हैं नान सबसे अधिक जन हा करते हैं कोई जन भीख मांगना हुआ नहीं मिलता । गुरु भक्ति शायद जना क मुकाबल दूसरे लागों मे नहीं है । और भी अनेक बातें हैं जिनके

कारण हमारा मृतक राज भी ऊना है। अब कबल आवश्यकता है धार्मिक-य की भावना का प्रसार करने की। यदि यह भावना जन जन के मन में जम जाय तो फिर न भोगों की धार्मिक वाछा होगी और न धन का अत्यधिक नृपणा रहेगा।

एक राजा ने एक साधु के दर्शन किये। वह बोला—महाराज ! आपके पास सुन्दर स्त्रियाँ दान में आती हैं। बाजार में से जाते हैं तो हनवाइया की टुकानें पड़ती हैं। क्या उनकी ओर आपका मन नहीं चलता ? साधु बोले—बाद में जवाब देंगे। कुछ दिन बाद साधु राजा से दान—राजन् ! तुम्हारी आठ स्त्रियों की धारु लेप है। तुम्हें जो भोज करना है सा कर लो। राजा यह सुनत ही घबड़ा गया। अब उस ने राजपाट में रुचि नहीं ले खाने पीने में। यहाँ तक कि उसको स्त्रियाँ से भी अरुचि हो गई। तब आठवें दिन साधु राजा के महलों में पहुँचे। बाल—राजन् ! इन स्त्रियों तो खूब भोज का हागी ? राजा ने उत्तर दिया—महाराज ! आप भोज की कल्पे है। मुझे रात में नीद नहीं आती स्त्रियों में खाना नहीं आता। रात दिन आँसुओं के सामने मौत खड़ी दिखाई देता है। साधु बोले—तुम्हारे प्रश्न का जवाब मिल गया तुम्हें। तू भोज का निश्चय होने पर भोगों से उदासीन हो गया। इसी प्रकार मुझे भी भोगों में कोई आसक्ति नहीं रही। मुझे भी निश्चय है कि एक दिन मुझे भी अवश्य मरना है। ऐसी दशा में ससार का सम्पूर्ण वस्तुभोग न माह हटना स्वाभाविक ही है।

हम भी इसी प्रकार अपने मन का वासनाभोग से दूर रखें और यह तभी ही संकल्प है, जब मन में धार्मिक-य भावना की ली सदा प्रज्वलित रहे।

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

ब्रह्मचर्य धर्म ब्रह्मचर्य धर्म का नाम ब्रह्मचर्य है। वह ब्रह्मचर्य व्यवहार निश्चय रूप से दो प्रकार का है। सम्पूर्ण काम का निजरा करके जो अपने स्वरूप में शीत, ताकत

मिथ्य वचन प्राप्त कर लेता है। उसका ब्रह्म या मिथ्य वचन परमात्मा लेना कहते हैं। व्यवहार में स्वप्न और दृश्यो का त्याग करके अपने प्राण माधन से लीन रहना अर्थात् मन बचन काय द्वारा मधुमा स्थिति का माना ब्रह्म क समान मानना इसका नाम व्यवहार ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य से एक ब्रह्म और दूसरा चर गच्छ है। व्यवहार ब्रह्मचर्य का इच्छित म गच्छ की अनात्म पर ध्यान रता चाति । किना भी गच्छ का अर्थ एक विश्वगण करके न लेते हैं तब तब उसका जा महारवपुण धर्म है वह हमारे समझ से नहीं आता है। ब्रह्मचर्य से ब्रह्म चर्य का गच्छ है। ब्रह्म और चर्य का ही गच्छ मिथ्य वचन एक ब्रह्मचर्य गच्छ बता है।

ब्रह्म का अर्थ है - मुझ मात्र कठिन या परमात्म भाव ब्रह्म लीजिए ब्रह्म एक ही है ता ब्रह्म की तरफ चर्चा करना अर्थात् गति करना उद्योग होना उसका अर्थ है जाना उसका लिये माधना करना अतः यही ब्रह्मचर्य का अर्थ है। गच्छ अर्थ है कि जो जीवन में परमात्मभाव की अर्थात् अनात्म रता है वही ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य जीवन में परमात्मभाव की अर्थात् अनात्म अर्थात् देना है वही व उसकी साधना से दूसरे विकारों का दमन करना भी प्राण्य बन जाता है। और दूसरे विकारों का दमन करने का अर्थ है महान् मन्त्र मधर । दिया जाता है कि मनुष्य बाहर की धम किराए तो बड़ी धर सना के साथ निभा रता है। निष्क-रूपे लगे कर जेऊ धारण करके पूरा धार्मिक बन जाता है मगर परमात्मभाव की प्राप्ति के निमित्त ब्रह्मचर्य का पावन करना उससे निग ब्रह्म कठिन रहता है। उसके मन का भीतर अनेक इच्छा उठे लगे हैं। ऐसे समय में अनेक विकार जाग उठते हैं। और उन विकारों की ध्याना से मनुष्य का मन बार बार मनुष्य से बगता है-भीतर भीतर। स्थिति में आया है ता दुनिया के मुखा का मोर। भागों से उदात्त कथा हाता है मूण । इस तरह से स्वयं की कथन से क्या रथा है ? और मन का तेगी बान मुनकर साधक बार-बार विचलित हाता है और ठीकर लोकर कभी-कभी गिरने का। पदबुल होने की भी बान साधता है। कभी कथा लेमा गता जाता है कि वाद्य मोर भा जाता है। ता इय कठिन कथा ब्रह्मचर्य के माग पर व ई स्थिति

साधक ही ठहर जाना है आगे बढ़पाना है और मोक्ष को प्राप्त करता है। इस सम्बन्ध में राजा भद्र हरि ने बहुत ही स्पष्ट भाषा में कहा है—

मत्तं भकुम्भ-दलने भुवि सन्ति शूरा,
केचित् प्रचण्ड-मगराजबधेऽपि दक्षा ।
किन्तु प्रवीणि वलिनापुरत प्रसह्य,
कन्दप-दप-दलने विरला मनुष्या ॥

यम शास्त्रों के विधान की भाषा में साधु का ब्रह्मचर्य पूरा माना जाता है परन्तु वह पूरणा ब्राह्म प्रत्याख्यात की दृष्टि से है। वह पूरा ब्रह्मचर्य का लभ्य रख कर ही जाने वाली एक महान् प्रतिष्ठा मान्य है। साधु स्व स्वयं और पर स्वयं दाना का ही त्याग करके बनता है। उसकी साधना में शूद्रस्य व समान स्वस्त्री का भी छूट नहीं पत्नी है। यम इसी दृष्टि का ध्यान में रखकर साधु के ब्रह्मचर्य का पूरा बताया गया है, अर्थात् अन्तर्जीवन में टटोलकर देख कि क्या वस्तुन उसका ब्रह्मचर्य पूरा हो गया है? क्या उसके सभी अन्तर्गुण समाप्त हो गये हैं? क्या बागना की सभी बूटें सूख गई हैं? नहीं यह सब कुछ नहीं हुआ है। अभी साधु को भी मन के विकारों में एक लम्बी लड़ाई लड़नी है। यह नहीं कि अर्थात् वासिष्ठमि कहा और यम उमा अन्ति ब्रह्मचर्य की पूरी साधना हो गई। उसी अन्ति अहिंसा मर्याद और ब्रह्मचर्य पूरे हो गये और जो साधु का साधना है वह पूरी हो गई ता फिर आगे के त्रिण जीवन ममार में क्या है? सब उम करना क्या है? उम जो कुछ जाना या वह या चुका है। उसी धर्म और उमी क्षण या पुरा है। उमके जीवन में पूरणा हो गई है। अनुद्धि जीवन में रहा हो नहीं। फिर सब वह किममे लड़ना है? किसलिग सधना कर रहा है? और साधना का मार्ग पर जो कर्म ममाल कर रख रहा है जो आन्तरिक किम प्रयोजन में रख रहा है?

साधु की पतिष्ठा लत ही ब्रह्मचर्य मर्याद और अहिंसा आदि में पूरणा हो जाती है ता अन्तर्गुण सब मह हुआ कि आन्तरिक में पूरणा हो

जानी है। चारित्र्य में पूर्णता प्राप्त करने पर जानत है कि कर्म का फल ही है। चारित्र्य की परिपूर्णता प्राप्त होने पर ही कर्म का फल है और मुक्ति प्राप्त करती है। फिर कोई भी कर्म का फल ही है।

ता मायुत्व की प्रतिष्ठा प्रतिष्ठा है और सब ज्ञान का ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है।

मन एता घोडा है इतना हठी और चपल है, कि कर्म के फल प्राप्त है उत और जिगा म और मोड पकडा है। फिर ही ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है।

चंचल हि मन कृष्ण, प्रमाथि घलघ्नु दुदुम् ।

ता पूर्ण मायता क क्षेत्र म उपस्थित है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है।

मन सब पर असवार ह, मन के मत घनेन ।

जो मन पर असवार है, वह तस्मिन् में एक ॥

मन सब पर असवार है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है।

ता कर्मा कर्मा एता हता है—जब कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है। कर्म का फल ही है।

इस्य दखन की मिलता है ता प्रत्यक्ष में तो यह मान्य होता है कि यह कुर्सी पर बठा है किन्तु वास्तव में कुर्सी इस पर बैठ गई है। जीवन की यह कितनी विचित्र बात है।

एक गुरु था और एक चला। प्रातः का जाली में दावों चल जा रहा था नदी पार स्नान करने। नगरी विनार पन्च तो कुछ साफ नजर नहीं आता था। जब वह गिष्य और गुरु नगी में स्नान करने लगे तो अचानक गुरु की दृष्टि एक काली चीज पर पड़ी। यह बहती हुई जा रही थी। तो उसने गिष्य से कहा—देख यह कम्बल बहा जा रहा है किमी का यह गया है। तू उसे पकड़ ला।

गिष्य ने कहा—महाराज मुझसे तो वह नहीं पकड़ा जायेगा। गुरु ने कहा—तू इतना हठवादी और कम्बल भी नहीं पकड़ा जाता। भ्रष्टा भी जाता है। गुरु ने अन्तर्गत और उसे पकड़ा तो कम्बल नहीं रीझ था। गुरु ने ज्योहा उस पकड़ा कि उसने गुरु को पकड़ लिया। अब गुरु अपना पिछ छुड़ाने की काशग कर रहा है और जल ने अन्तर गुत्वमगुत्या हो रही है। चले की कुछ स्पष्ट दाख नहीं रहा था। दर ही गई तो उसने आवाज दी—गुरु जा कम्बल छाड़ दो रहने भी न। कम्बल और वहीं माग लेंगे। तब गुरु ने कहा—गुरु तो कम्बल छोड़ना चाहता है किन्तु कम्बल ही उस नहीं छाड़ रहा है।

मा जा बात गुरु और गिष्य का है उही बात सार ससार की है। हमने किसी चीज का चाहा और उस पकड़ने गए और पकड़ लिया बहुत बार ऐसा होता है कि वही चीज हम पकड़ नहीं है और ऐसा पकड़ लती है कि सारी जिन्गीया बीन जाना है फिर भापिण्ड नहीं छाड़ता।

समार की यही भाषा है। हम दगा में मुक्ति पाने के लिए ही परिभाषा, सत्य अस्तव्य और अज्ञान्य की बना बनलाई गई है। मनुष्य एक ही भटक में इन दगा से अपने आपका छुड़ा सकता है किन्तु मनु की गति बड़ी विचित्र है वह सब पर गवार है।

बान यह है कि मन आत्मा का ही शक्ति है आत्मा न ही उस जन्म लिया है। अब जन्म का बाले में यह कला भी हानी चाहिए कि वह उस ध्यान का मरण मरक। किन्तु वह ऐसा भूत है कि जिन जगा ता लिया है, किन्तु उस का मरण की यदि धमना नहीं ता वह जसा चाहता बसा हागा। उनका नचाय भाषना पडगा।

आज आत्मा को विषयवस्तु बनाने बान पंचांगिय विषय ही हैं। ये पंचांगिय विषय भूत पिगाथ का समान हैं। यह जन्म आत्मा का ध्यान प्रवेश कर अनक गतिवा म नचाता है। इसलिए इनम पिण्ड हडाने का लिए पुण्याना नेमनाथ तीर्थद्वार पाशवनाथ भगवान महावीर ने जन्म में ही उस पिगाथ का परास्त कर ध्यान अखण्ड धिनापी ब्रह्मण का पाया। अधान् परमात्म का प्राप्ति की। इसलिए जो जीव धपना हित करना चाहता है उसको हमेशा इस ब्रह्मणय वन को मन बचन काय से पावन करना चाहिए। वह इस लोक में धीर परलाक में बलनाय होकर धन्य म सम्पूर्ण जन्म क्षय करने का बल प्राप्त करना है। ब्रह्मण्य की महिमा अपार है। जिनका पास ब्रह्मणय है उनका राम नन्दा हाता गरीर की शक्ति बनी रहती है। विद्या महक प्राप्त हो जाता है स्मरण शक्ति बढती जाता है। इस तरह ब्रह्मणय म धन्य गुण है।

ब्रह्मणय म धन्य महापुण्य प्राप्त हा मय है - धन्यक निष्कलक सुभूयस कुनभूयस आत्मा। माता धन्यमनी शोषण प्रभावना धान् धन्य स्त्रिया जन्म म प्रसिद्ध हा गई है। इसलिए जो प्राणी धपनी बल्याण करना चाहता है उसको गानधन धन्य पालन करना चाहिए। धीर उम मान का शिगाहन बामा कुनर्गत का रयाग कर रना चाहिए। कहा भी है कि—

मात्रा स्वप्ना दुहित्रा वा, न विविक्तासनो भवेत् ।
-बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कथति ॥

बुद्धिमान आत्मा का धपनी माता बहिन पुत्री इत्यादि के साथ भा एकात्म ध्यानवर्ता नहा होना चाहिए क्यकि लिया बढी बरवान है

जा कि विद्वान् पुत्र्य का भी ध्रष्ट कर लेती है । इस प्रकार स्त्री जाति का भा पर-मुख्य मात्र स अपना रक्षा करनी चाहिए । पर पुत्र्य सत्ता त्याज्य है । अपना रिश्तेदार भाई वधु कुटुम्बीजन भी भ्रमर छोटा हो तो विश्वास का पात्र नहीं है । लाटी स्त्रियों का सम्पर्क भी गीतवता स्त्री को दूर स ही त्याग देना चाहिए । नीतिकार ने कहा है कि —

पान द्रुजन-ससग्र पत्या च विरहोऽटनम् ।
श्वपनश्चान्य-गृहे वासो नारीणा दूषणानि पट् ॥

मद्यपान द्रुजन ससग पति की जुटाई नगर मे यत्र तत्र धूमना घाय के घरा मे साना तथा अन्य घरा मे रहना ये स्त्रियो के छह दूषण है । इसलिए इन छहों दोषा को छोड देना चाहिए । अर्थात् नशील पदार्थों का सवन कभी नहा करना चाहिए, द्रुजन का कभी ससग नही करना चाहिए, पति की सत्ता सेवा म रटना चाहिए नगर म गुण्डे लोग अधिक धूमते हैं इसलिए उनमें अपने का बचाने क लिए स्वच्छन्द अकेली यत्र तत्र नही जाना अना चाहिए तथा पर पुरुषो के घर मे सोना नही चाहिए तथा पर पुरुषा क घर मे निवास अर्थात् उठना बैठना रहना नही चाहिए । ना गाल का पालते हैं उनक लिए थी सामग्रभ आचार्य कन्त हैं कि —

हरति कुलकलक लुम्पते पापक,
सुकृतभुपचिनोति श्लाघ्यतामातनोति ।
नमर्यति सुरवर्गं हन्ति सर्वोपसर्गं,
रचयति शुचिशील स्वर्गं भोक्षो सलीलम् ॥

जो प्राणी अपना आत्मा म पवित्र शील धर्म का धारण करता है वह अपने कुल क लग हुए कर्म का नाश करता है पाप रूपी कीचड को धोता है पुण्य का संचय करता है जगत् मे सबत्र महिमा को विस्तारता है दब गंग उसको प्रणाम करता है सम्पूर्ण उपसर्गों का विनाश कर देता है और पवित्र स्वर्ग और माध को लीलामात्र मे ही प्राप्त कर लेता है । यह सब गीत का माहात्म्य है ।

आचायेरत्न १०८ श्री देशभूषण जी महागज

द्वारा लिखित श्रीर संपादित महत्त्वपूर्ण ग्रंथ

- १ भूवलय सप्तम्य १ स १४ तक
- २ भावनासार
- ३ शास्त्र सार समुच्चय
- ४ निर्वाण लक्ष्मीपति स्तुति
- ५ चौहू गृणम्यान वर्षा
- ६ सत्य दान
- ७ भगवान महावीर
- ८ धर्माष्टांगार (द्विती-मराठा मे)
- ९ ध्यान सूत्राणि
- १० भूवलय व बुद्ध पत्नीय दानाव माय
- ११ सपरानितवर गतर—प्रथम भाग
- १२ , , , , द्वितीय भाग
- १३ वैमठ गतावा पुत्र
- १४ उपनिग सार सप्रह—भाग १
- १५ , , , , भाग २
- १६ , , , , भाग ३
- १७ , , , , भाग ४
- १८ , , , , भाग ५
- १९ , , , , भाग ६
- २० निरञ्जन स्तुति
- २१ गुरु-गिष्य प्रश्नात्तरी
- २२ दयणुसाह